ISSN 3107 – 4936 (ONLINE)

KALAA SAMIKSHA

(A MULTIDISCIPLINARY JOURNAL OF ART, LITERATURE, CULTURE, AND CONTEMPORARY SOCIETY)

Editor In Chief

Kushagra Jain

Associate Editor

Dr. Mantosh Yadav

Shivani Shah

Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

Editorial Board Members

1. **Dr. Kunjana Acharya**, Head (In-charge), Dept. of Journalism and Mass Communication, Mohanlal Sukhadia University, Udaipur.
2. **Jyoti Singh**, Assistant Professor, Fashion Design Dept., School of Journalism & Liberal Arts, DBUU, Dehradun.
3. **Raj Kumar Singh**, Assistant Professor, Institute of Fine Arts, School of Creative & Performing Arts, CSJM University, Kanpur.
4. **Prof. Ritu Johari**, Professor & Head, Department of Fine Arts, Jai Narain Vyas University, Jodhpur.

Advisory Panel

1. **Santosh Kumar,** Head of Department, Dept. of Fine Arts & Fashion Design, Ras Bihari Bose Subharti University, Dehradun.
2. **Ashok Banerjee (Shakha Bandyopadhyay),** Former Joint Director, Department of Information & Public Relations, Government of Uttar Pradesh.
3. **Dr. Usha Banerjee** Former Dean & Head, Bhatkhande Music Institute (Deemed University) Currently Editor, *Kala Vasudha*.
4. **Dr. Bhupat Dudi,** Founder, Kaman Art Society, Jodhpur.
5. **Dr. Deepak Salvi,** Assistant Professor, Government Meera Girls College, Udaipur, Rajasthan.
6. **Kinshuk Sharma**, Assistant Professor, History, Shri Govind Guru Government College, Banswara.
7. **Dr. Suraj Soni**, Assistant Professor, State Council of Educational Research and Training (SCERT), Udaipur, Rajasthan.
8. **Neha Jain**, Principal, Govt. Sr. Secondary School, Hikawada, Salumber, Rajasthan.
9. **Dr. Yashpal Baranda,** Artist, Kala Samiksha.
10. **Prem Shankar Chaubisa**, Lecturer in Geography, PM Shri Govt. Sr. Sec. School, Salumber, Rajasthan.

Technical Support Team

- **Jagdish Menaria**, Artist.
- **Ashok Menaria,** Artist.
- **Niharika Jain,** Coordination Support.

KALAA SAMIKSHA (Peer Review)
Copyright © 2025 by Author
All rights reserved. No part of this book may be reproduced or transmitted in any form or by any means without written permission from the Publisher.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

संपादकीय

कला केवल रूप और सौंदर्य की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानवीय भावनाओं, पर्यावरणीय संतुलन और वैश्विक विचार-विमर्शों को संरक्षित करने वाला एक सशक्त एवं जीवंत माध्यम है। *'कला समीक्षा'* पत्रिका का जून 2026 अंक (भारतीय पारंपरिक शिल्प परंपराओं की जड़ों से लेकर आधुनिक प्रदर्शनकारी कलाओं तथा तकनीकी परिवर्तनों की व्यापक यात्रा को प्रस्तुत करने का एक सार्थक प्रयास है।

इस अंक में प्रकाशित शोध आलेख कला के विभिन्न आयामों को उजागर करते हैं, जो समाज को नवीन दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। वर्तमान समय में जब प्लास्टिक प्रदूषण और रासायनिक संकटों के कारण पर्यावरण गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है, तब चित्रकूट की प्राचीन काष्ठ कला परंपरा और हड़प्पा काल से चली आ रही पारंपरिक मृतिका कला सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण के लिए प्राकृतिक एवं प्रभावी विकल्प के रूप में सामने आती हैं। ये कलाएँ इस तथ्य को प्रमाणित करती हैं कि भारतीय सांस्कृतिक विरासत में प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने की वैज्ञानिक दृष्टि सदैव विद्यमान रही है।

यह अंक कला के परिवर्तनशील, गतिशील और बहुआयामी स्वरूप का भी गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। पूर्वोत्तर भारत की बिश्नुप्रिया मणिपुरी लोकगीत परंपरा के संरक्षण एवं संवर्धन से लेकर राजस्थान की ऐतिहासिक वास्तुकला को लघु शिल्प मॉडलों के माध्यम से सुरक्षित रखने के प्रयास इस संकलन के महत्वपूर्ण विषय हैं। इसके साथ ही, उन्नीसवीं शताब्दी से डिजिटल युग तक छायांकन (Photography/Cinematography) में आए तकनीकी परिवर्तनों ने कलाकारों की रचनात्मक सोच, अभिव्यक्ति और दृश्य भाषा को किस प्रकार प्रभावित किया है, इसका गंभीर एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन भी इस अंक में प्रस्तुत किया गया है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय कला की यात्रा अत्यंत समृद्ध और गौरवपूर्ण रही है। नाट्यशास्त्र के सिद्धांतों पर आधारित भारतीय शास्त्रीय नृत्य परंपराएँ केवल शारीरिक अनुशासन और भावनात्मक अभिव्यक्ति (नवरस) का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे आत्मा, मन और शरीर के संतुलन द्वारा आनंद की अनुभूति का आध्यात्मिक मार्ग भी प्रस्तुत करती हैं। उदय शंकर जैसे महान कलाकारों के योगदान और अंतःसांस्कृतिक सौंदर्यशास्त्र के विकास के माध्यम से भारतीय नृत्य ने वैश्विक मंचों पर अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की है। आज भारतीय नृत्य पाश्चात्य बैले और समकालीन कला विधाओं के साथ संवाद करते हुए अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं को विश्व स्तर पर प्रस्तुत कर रहा है।

वर्तमान समय में वैश्विक मानकीकरण और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) के बढ़ते प्रभाव के बीच ललित कला शिक्षा की नीतियों में सुधार अत्यंत आवश्यक हो गया है। हमें केवल पश्चिमी कला मॉडलों का अनुकरण करने के स्थान पर अपनी बहुलवादी कला परंपराओं, क्षेत्रीय शिल्प विधाओं और बहुभाषी शोध को आधुनिक तकनीकी ज्ञान के साथ जोड़ने की आवश्यकता है। यह अंक कला शिक्षा, सांस्कृतिक नीतियों और कला बाजार के मध्य संतुलित एवं रचनात्मक संबंध स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत करता है।

हमें विश्वास है कि पारंपरिक मूल्यों, आधुनिक तकनीकों और वैश्विक संवाद का यह समन्वित संकलन शोधकर्ताओं, कलाकारों, विचारकों और कला प्रेमियों के मध्य नए विमर्श को जन्म देगा तथा भारतीय कला की बहुलवादी सांस्कृतिक पहचान को नई संवेदनशीलता और व्यापकता प्रदान करेगा।

शुभकामनाएँ सहित,

कुशाग्र जैन
प्रधान संपादक

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

TABLE OF CONTENTS

S. No.	Title of the Article	Author(s)	Page No.	Language
1	*A Study on the Role of Terracotta Art in Environmental Conservation*	*Poonam Devi & Dr. Jaishankar Mishra*	135	English / Hindi
2	*Exploring Materiality, Structure, and Cultural Identity in Rajasthan's Heritage Architecture through Miniature Model as a Craft Practice*	*Dr. Gauri Shree Bagula*	139	English
3	*Living Traditions in Motion: Preservation, Transmission, and Innovation in Bishnupriya Manipuri Folk Songs of North-East India*	*Ashu Kanti Sinha & Dr. Rakesh Kumar*	145	English
4	*Cinematography: The Impact of Its Evolving Nature on the Creative Vision of Artists (**छायांकन: इसके बदलते स्वरूप का कलाकारों की रचनात्मक दृष्टि पर प्रभाव**)*	*Dr. Harikesh Yadav*	149	English / Hindi
5	*Ameliorate the Fine Art Education and Curriculum with Our Pluralism Art Education and Policy: Preserving Pluralism in an Era of Global Standardization in India*	*Rohit Kumar Tushar*	154	English
6	*Indian Performing Art in the Global Arena: Body, Ritual, and Identity – A Pathway to Ānanda*	*Radhika Gowardhan & Prof. Dr. Jagdish Khaire*	163	English
7	*Contribution of Wooden Art in the Promotion of Folk Art of Chitrakoot (**चित्रकूट की लोक कला संवर्धन में काष्ठ कला का योगदान**)*	*Anuj Mishra & Dr. Prasanna Patkar*	175	English / Hindi
8	*Intercultural Aesthetics: Indian Dance in Conversation with World Art Traditions*	*Dr. Tripti Gupta*	183	English

Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 135-138 (Total PP 04)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/EWYD7393

1. A STUDY ON THE ROLE OF TERRACOTTA ART IN ENVIRONMENTAL CONSERVATION (पर्यावरण के प्रति मृतिका कला की भूमिका का)

Poonam Devi[a]* Dr. Jaishankar Mishra[b]

[a] *Research Scholar, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramoday Vishwavidyalaya, Chitrakoot, Satna*

[b] *Associate professor, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramoday Vishwavidyalaya, Chitrakoot, Satna*

[a]*Email: ph.d.poonam004@gmail.com*

Abstract

The research paper titled "A Study on the Role of Clay Art vis-à-vis the Environment" highlights the environmental significance and relevance of the ancient Indian art form known as *Mritika Kala* (clay art). Evolving since the Harappa-Mohenjo-daro era, this art form represents not only a rich cultural heritage but also offers an effective, natural solution for environmental conservation amidst the current plastic crisis and climate change. The research contrasts the ecological damage caused by Plaster of Paris and synthetic chemicals with the biodegradable nature of clay idols. The primary objective of the study is to align this traditional art form with the Sustainable Development Goals (SDGs). It emphasizes the necessity of public awareness, government incentives, and educational initiatives to address commercial challenges. In conclusion, clay art serves as a powerful medium for maintaining the balance between culture and nature, capable of ensuring a clean and safe environment for future generations.

प्रस्तुत शोध पत्र "पर्यावरण के प्रति मृतिका कला की भूमिका का अध्ययन" प्राचीन भारतीय कला 'मृतिका कला' के पर्यावरणीय महत्व और प्रासंगिकता को रेखांकित करता है। हड़प्पा-मोहनजोदड़ो काल से विकसित यह कला न केवल समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर है, बल्कि वर्तमान प्लास्टिक संकट और जलवायु परिवर्तन के दौर में पर्यावरण संरक्षण का एक प्रभावी और प्राकृतिक समाधान भी है। शोध में प्लास्टर ऑफ पेरिस और कृत्रिम रसायनों से होने वाले पारिस्थितिकी नुकसान के विपरीत मिट्टी से बनी मूर्तियों की जैव-अवकक्रमणीय (biodegradable) विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) के साथ पारंपरिक कला का सामंजस्य स्थापित करना है। इसमें व्यावसायिक चुनौतियों के समाधान हेतु जन जागरूकता, सरकारी प्रोत्साहन और शैक्षणिक स्तर पर प्रयासों को आवश्यक माना गया है। निष्कर्षतः, मृतिका कला संस्कृति और प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने का एक सशक्त माध्यम है, जो आने वाली पीढ़ियों को स्वच्छ और सुरक्षित पर्यावरण प्रदान कर सकता है।

Keywords: Terracotta Art, Environmental Conservation, Sustainable Development, Cultural Heritage, Pollution

मृतिका कला, पर्यावरण संरक्षण, सतत विकास, सांस्कृतिक धरोहर, प्रदूषण।

---

* Corresponding author.

प्रस्तावना

आदिकाल से ही मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ कला का भी विकास होता रहा है। प्राचीन काल से ही मानव अपने मानसिक भावना, विचारों एवं धर्म के प्रति आस्था को व्यक्त करने के लिए कला स्वरूपों का सहारा लेता रहा है, मृतिका कला उन कलाओं में से प्रमुख स्थान रखती है। भारत की प्राचीनतम कलाओं में से एक मृतिका कला का इतिहास आद्यैतिहासिक काल के हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की सभ्यता से जुड़ा हुआ है। यह कला मिट्टी के प्रयोग द्वारा निर्मित होने के कारण न केवल सांस्कृतिक एवं धार्मिक महत्वता रखती है, अपितु पर्यावरणीय दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी है। वर्तमान में जब संपूर्ण संसार प्लास्टिक संकट, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन जैसी समस्याओं से लड़ रहा है ऐसे समय में मृतिका कला का पर्यावरणीय महत्व और भी बढ़ जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र इसी दृष्टि से मृतिका कला के पर्यावरण संरक्षणकारी पहलुओं, इसकी प्रासंगिकता और भविष्य की संभावनाओं का अध्ययन प्रस्तुत करता है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 135-138 (Total PP 04)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/EWYD7393

समस्या प्रस्तुति

आज के समय में कला केवल आस्था या सौंदर्य का विषय नहीं रह गई है, बल्कि उसका संबंध पर्यावरण संरक्षण की चुनौतियों से भी है। प्लास्टर ऑफ पेरिस, कृत्रिम रसायन व प्लास्टिक से बनी मूर्तियां हमारे पर्यावरण को अत्यंत गंभीर नुकसान पहुंचा रहे हैं। नदियों, तालाबों का प्रदूषण, मिट्टी की उर्वरता में कमी और मानव स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव इसकी बड़ी चुनौतियां हैं। इस संदर्भ में यह शोध आवश्यक है कि-

1.मृतिका कला किस भांति पर्यावरण के अनुकूल है?

2.इसका सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक योगदान पर्यावरण संरक्षण से किस हद तक जुड़ा हुआ है?

3.वर्तमान समय में इस कला को प्रोत्साहित कर पर्यावरणीय संतुलन किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है?

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य यह अध्ययन करना है कि-

1.मृतिका कला का पर्यावरण के संरक्षण में क्या भूमिका है, इसका अध्ययन करना ।

2.वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट के समाधान के रूप में मृतिका कला की प्रासंगिकता का अध्ययन ।

3.सतत विकास और पारंपरिक कला के बीच सामंजस्य स्थापित करना ।

4.समाज में पर्यावरण के प्रति चेतना जागृत करने हेतु मृतिका कला की भूमिका का विश्लेषण।

मृतिका कला का सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारतवर्ष में मृतिका कला का इतिहास सिंधुघाटी सभ्यता से आरंभ होता है । इस सभ्यता में मृतिका कला की क्रांति सी व्याप्त थी। हड़प्पा से प्राप्त मातृ देवी की प्रतिमाएं मोहनजोदड़ो से मिले पशु- पक्षी व खिलौने एवं दैनिक जीवन के उपयोगी पात्र, भवन इत्यादि मृतिका कला का प्रमाण है। इसके पश्चात् वैदिक काल,मौर्य काल, शुंग काल, कुषाण काल, गुप्त काल सातवाहन काल इत्यादि कालक्रमों में तथा मध्यकालीन भक्ति आंदोलन में भी इस कला का विशेष स्थान रहा है।
भारतीय कला संस्कृति एवं धार्मिक दृष्टि से मृतिका कला का प्रयोग विशेषकर दुर्गा पूजा, दीपावली, गणेश चतुर्थी, सरस्वती पूजा तथा ग्रामीण अंचलों में लोक देवी-देवताओं की प्रतिमाओं के निर्माण में होता है। यह कला लोक जन-जीवन, आस्था और संस्कृति से सीधे तौर पर जुड़ी हुई है।

चित्र:1 मौर्यकालीन पशु मूर्तियां

चित्र:2 अहिक्षत्र से प्राप्त मृतिका कला

पर्यावरण की दृष्टि से मृतिका कला की उपादेयता

प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग – मृतिका कला में मुख्य रूप से मिट्टी, प्राकृतिक रंग, पानी, घास, कपड़े, बांस जैसे प्राकृतिक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। यह सभी पदार्थ प्राकृतिक पुनर्चक्रणीय और जैव-अवकक्रमणीय होते हैं।

प्रदूषण मुक्त निर्माण - प्लास्टिक और प्लास्टर ऑफ पेरिस की मूर्तियां जल में घुलकर जल-प्रदूषण फैलाती हैं। वहीं मृतिका कला धीरे-धीरे घुलकर मिट्टी में ही मिल जाती है, और पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुंचती।

सतत विकास में योगदान- मृतिका कला ग्रामीण आंचल के कलाकारों की आजीविका का प्रमुख साधन है। यह कला स्थानीय स्तर पर रोजगार प्रदान करती है, और पर्यावरण संरक्षण को भी बढ़ावा देती है।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 135-138 (Total PP 04)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/EWYD7393

प्रकृति और धार्मिक आस्था का संबंध - भारत की संस्कृति में देवी-देवताओं की प्रतिमाएं मिट्टी से निर्मित कर पूजा करने और फिर जल में विसर्जित करने की परंपरा रही है। यह प्रकृति और आस्था के बीच संतुलन का प्रतीक है।

चित्र:3,4 अहिक्षत्र से प्राप्त गंगा जमुना की मूर्तियां

वर्तमान युग की चुनौतियां

व्यवसायीकरण - वर्तमान में मूर्ति निर्माण में प्लास्टर ऑफ पेरिस, कृत्रिम रंगों और रासायनिक पदार्थों का अधिक प्रयोग होने लगा है।

सस्ते विकल्पों की मांग- मृतिका कला की अपेक्षा प्लास्टर ऑफ पेरिस की मूर्तियां सस्ती और हल्की होती हैं, जिससे लोग उनका अधिक प्रयोग करते हैं।

पर्यावरण के प्रति जागृति का अभाव - समाज में अब भी पर्यावरण की दृष्टि से मूर्तियों के चयन को लेकर पर्याप्त जागरूकता नहीं है।

मृतिका कलाकारों की आर्थिक समस्याएं - मृतिका कला में लगे कलाकारों को उचित मूल्य नहीं मिल पाने के कारण वह इस कला परंपरा से दूर होते जा रहे हैं।

मृतिका कला के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण हेतु समाधान

1.पर्यावरणीय मित्र रंगों का उपयोग - प्राकृतिक रंग, चावल का आटा, हल्दी, गेरू आदि का प्रयोग किया जाए।

2.सरकारी व गैर-सरकारी पहल - ललित कला अकादमी, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और अन्य संस्थाओं को मृतिका कला को बढ़ावा देने के लिए विशेष योजनाएं बननी चाहिए।

3.शैक्षणिक स्तर पर जागरूकता - महाविद्यालयों और विद्यालयों में कार्यशालाओं के आयोजन द्वारा विद्यार्थियों को मृतिका कला से जोड़ना चाहिए।

4.कलाकारों को प्रोत्साहन - सरकार को ग्रामीण अंचल व शहरी कलाकारों को प्रशिक्षण, आर्थिक सहायता और विपणन की सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

5.जन जागरूकता अभियान - सामाजिक संगठनों और मीडिया को मृतिका कला के पर्यावरणीय महत्व को जन-जन तक प्रचारित करना चाहिए।

चित्र:5,6 पर्यावरण संरक्षण विषय संबंधी मृतिका कला

सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) और मृतिका कला से सामंजस्य

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा निर्धारित सतत विकास लक्ष्य 2030 (SDGs) में सतत उपभोग, पर्यावरण संरक्षण और सांस्कृतिक धरोहर संरक्षण का विशेष उल्लेख है। मृतिका कला इन लक्षणों के साथ सामंजस्य स्थापित करती है-

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 135-138 (Total PP 04)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/EWYD7393

लक्ष्य 12 सतत उपभोग एवं उत्पादन को बढ़ावा।

लक्ष्य 13 जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का समाधान।

लक्ष्य 15 भूमि एवं पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण।

लक्ष्य 11 सांस्कृतिक धरोहर और परंपरा का संरक्षण।

निष्कर्ष

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मृतिका कला सिर्फ सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से ही नहीं अपितु पर्यावरण की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। मृतिका कला हमें सिखाती है, कि संस्कृति और प्रकृति के बीच संतुलन बनाए बिना जीवन संभव नहीं है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम आधुनिक तकनीकी और परंपरागत मूल्यों का समन्वय कर इस कला को प्रोत्साहित करें।

अगर समाज, कलाकार और सरकार सब एकजुट होकर पर्यावरण मित्र मृतिका कला के निर्माण और उपयोग को प्रोत्साहन दें, तो यह कला न केवल हमारी सांस्कृतिक धरोहर को जीवंत रखेगी, अपितु आने वाली पीढ़ियों को भी एक संतुलित, सुरक्षित और स्वच्छ पर्यावरण प्रदान करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Agrawal, V.(2018). Indian terracotta art: Tradition and Transformation. Delhi: Aryan Books.
2. Chakrabarti, k.(2015). Eco-friendly Practices in Indian Clay Art. Journal of Environmental Art Studies,12(3),45-57.
3. Lalit Kala Akademi. (2020). Terracotta and Environmental Sustainability. New Delhi.
4. Sharma, R.(2017). मृण्मूर्ति कला और पर्यावरण संरक्षण। भारतीय कला पत्रिका, 22(2), 55-62 ।
5. Ministry of Culture, Government of India. (2021). Clay Art and Sustainability Initiatives. Retrieved From https://indiaculture.gov.in

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

2. EXPLORING MATERIALITY, STRUCTURE, AND CULTURAL IDENTITY IN RAJASTHAN'S HERITAGE ARCHITECTURE THROUGH MINIATURE MODEL AS A CRAFT PRACTICE

Dr. Gauri Shree Bagul[a]*

[a] *Assistant Professor, Rachana Sansad College of Applied Arts*

[a] *Email: gaurib@rachanasansad.edu.in*

Abstract

This paper investigates miniature craft models as experiential tools for understanding materiality, structural logic, and cultural identity embedded within Rajasthan's heritage architecture. Beyond representation, the study presents miniature modelling as a craft-based research method that allows for tactile interaction with conventional architectural systems. The study investigates how features like arches, domes, jharokhas, jaali screens, courtyards, and ornamental surfaces represent local resources, artisanal abilities, and sociocultural values by creating a meticulously scaled miniature that is modelled after Rajasthani palace and haveli architecture.

Through cutting, assembling, layering, and surface detailing, the miniature's construction process reflects traditional craft methods and displays the ingrained knowledge of regional artisanship. By enabling careful examination of structural composition, spatial hierarchy, and decorative language that could otherwise go unnoticed at full scale, the model serves as a tool for both education and analysis. The research illustrates how tiny models can act as interpretive tools that preserve legacy knowledge and convey cultural narratives by fusing architectural studies with craft-making.

In addition to providing an alternate approach to recording and instructing Indian architectural traditions, the study makes the case that tiny craft practices strengthen the role of craft as a living cultural expression by bridging material understanding, community memory, and cultural identity.

Keywords: Miniature Model, Practice in craft, Materiality, Cultural Identity, Rajasthan Heritage Architecture.

---

* Corresponding author.

Introduction:

The craft traditions that form the foundation of India's architectural legacy blur the lines between construction, creation, and cultural expression. In contrast to industrial construction methods, traditional Indian architecture developed as a result of the expert craftsmanship of craftspeople who moulded indigenous materials into buildings that represented regional identity, social values, and climate responses. Rajasthan's historical architecture, which includes elaborate jaali screens, carved jharokhas, ornamental arches, painted surfaces, and stone embellishments in

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

palaces, havelis, and forts, is the best example of this fusion. These components embody the collective wisdom, methods, and life experiences of artisan groups and are not just ornamental pieces.

Nonetheless, there are difficulties in comprehending such architecture. Large monuments can make it difficult to closely examine structural features and material linkages. While visual records are produced by traditional documenting techniques like drawings, photos, and digital models, they usually lack tactile engagement and experience depth. As a result, nothing is known about the embodied knowledge of making, which is essential to craft traditions. By suggesting tiny craft modelling as an alternate approach to learning about heritage building through practical application, this study fills this knowledge gap.

Although miniature models have long been used as design and visualisation tools, less emphasis has been placed on their potential as craft-based research tools. Miniatures become laboratories for studying material behaviour, structural logic, and artisanal techniques when they are viewed not only as scaled duplicates but as objects made by hand. Form, proportion, and building principles are directly engaged with by the maker through the process of measuring, cutting, assembling, and detailing. In this way, observation becomes embodied knowledge through micro modelling.

This essay provides a thorough analysis of a handcrafted miniature model that draws inspiration from the palace architecture of Rajasthan. Using layered materials and hand-rendered patterns, the model replicates important architectural elements like domes, arches, courtyards, lattice screens, and ornamental surfaces. Every element is handled like a craft project, requiring the same level of accuracy, perseverance, and ability as conventional architectural methods. By doing this, the model is transformed into a representation and an interpretation of heritage, demonstrating how architectural identity is shaped by material selections and construction methods.

This activity is placed within the larger framework of "craft as cultural identity," according to the research. Rajasthan's constructed environment has historically been characterised by materials including wood, pigments, stone, and lime plaster. Its artistic language has also been influenced by the abilities of builders, painters, and stone carvers. The study illustrates how craft knowledge may be stored, examined, and shared through manufacturing by condensing these attributes into a small format. The model serves as a teaching tool that promotes students' and researchers' deeper engagement with traditional architecture in addition to being a visual artefact.

The miniature also promotes cultural continuity and communal memory. In India, practical experience is frequently used to teach craft traditions instead of written education. The approach re-establishes the connection between classic information transfer methods and modern practice by embracing comparable experience processes. It emphasises how architectural heritage is a living system maintained by artisanal abilities and group involvement rather than a static history.

Therefore, this paper argues that miniature craft models serve as effective tools for understanding materiality, structural systems, and cultural narratives embedded within Rajasthan’s heritage architecture. By integrating craft practice with architectural analysis, the study proposes a methodology that values making as research. Through this approach, the miniature becomes more than a scaled object it becomes a medium through which cultural identity is explored, preserved, and reinterpreted for future generations.

Literature Review:

Studies of Indian material culture have long recognised the connection between craft, architecture, and cultural identity. The skilled labour of artisans whose methods combine design, building, and adornment has historically produced traditional Indian architecture rather than industrial manufacture. Vernacular architecture experts stress that

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

Indian buildings serve as more than just practical shelters; they are also stores of social values, cultural memory, and inherited knowledge systems. Craft is not an adjunct to architecture in this sense; rather, it is the cornerstone of it.

Materiality has a significant role in forming regional identities, according to research on Indian craft practices. Locally sourced materials that have a direct impact on architectural form and aesthetics include sandstone, lime plaster, marble, wood, and natural pigments. These materials' tactile properties, when paired with climate-responsive design methods, create structures that are both culturally and environmentally unique. Studies of Rajasthan's architectural legacy, in particular its palaces, havelis, and forts, show how surface embellishment, fresco painting, carving, and jaali work turn structural components into culturally expressive forms. These methods show that, rather than using standardised construction processes, Rajasthani architecture is heavily reliant on artisanal ability and handicraft expertise.

In craft theory, the idea of craft as embodied knowledge has also received a lot of attention. Instead of relying only on written or visual evidence, scholars contend that craft knowledge is conveyed through doing and exists in the body. Within communities, skills like carving, sculpting, assembling, and finishing are acquired via intergenerational learning and repeated practice. It is necessary to physically interact with tools and materials in order to properly comprehend this tacit knowledge. According to these viewpoints, comprehending traditional architecture requires more than just visual examination; it also calls for involvement in the creation processes.

The intersection of miniature craft and architectural study therefore offers a promising area of inquiry. Miniatures historically hold significance in Indian art practices, from temple models to painted architectural depictions and toy-making traditions. These objects demonstrate that scaled representations have long served cultural and pedagogical purposes. Extending this tradition into contemporary research allows miniature models to function not only as illustrative objects but also as analytical tools that bridge craft practice and architectural understanding.

Therefore, existing literature on craft traditions, materiality, architectural pedagogy, and practice-led research collectively supports the premise that miniature craft models can serve as meaningful tools for understanding heritage architecture. Yet the specific application of miniature modeling as a method for studying Rajasthan’s architectural identity remains insufficiently addressed. This paper seeks to contribute to this gap by demonstrating how handcrafted miniature models operate simultaneously as craft objects, research instruments, and carriers of cultural knowledge.

Objective:

1.Should carefully observe and record the architectural elements of Rajasthan's historic buildings, such as arches, domes, jharokhas, jaali screens, courtyards, and ornate surfaces.

2. To investigate building small models as a hands-on, craft-based approach to studying architectural form, proportion, and spatial organization.

3.To examine how the miniature's building methods, materials, and textures represent local material culture and traditional craft methods.

4.To comprehend how handicrafts, embodied knowledge, and artisanal skills contribute to the smaller-scale reconstruction of historic buildings.

5.To assess how well tiny handmade models work as teaching and research aids for sharing cultural stories and conserving knowledge about architectural history.

6.To analyse the ways in which Rajasthani architectural traditions use artisan activities to express cultural identity and communal memory.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

Figure 1

Figure 2

Researching the structural and artistic heritage of Rajasthan is a fascinating journey into a world where science, spirituality, and art converged. my experimental miniature model is an excellent way to demonstrate that these historical structures weren't just "built," but were engineered with a sophisticated understanding of geometry and environmental harmony.

Here is a detailed breakdown of my research points, framed with professional and academic clarity.

Methodology:

The Art of Reconstructing Miniatures

A methodical "Bottom-Up" methodology was used to recreate the Ganesh Pol, moving from structural engineering to exquisite embellishment.

Phase 1: Layering of Structures (Figures 1, 2, & 3)

Structural identity is the main focus of the first stage. The model's depth was created by employing a "Layering Technique."

Base Framework: Creating the triple-entry gateway by cutting the main elevations. Depth Construction: The balcony projections and chhatris (dome-shaped pavilions) are assembled in Figures 2 and 3. Layering materials allows the Rajput architecture's deep shadows to be physically incorporated into the model rather than merely painted on.

Phase 2: Preparing and refining the surface (Figures 4 and 5)

After the skeleton was finished, Materiality became the main focus.

Priming and Sanding: To mimic the Araish (traditional lime plaster) finish of the original fort, the model's surface was smoothed, as shown in Figure 4.

Component Detailing: Before being incorporated into the main facade, individual architectural pieces, including the brackets and pillars, are prepared as shown in Figure 5. This guarantees that each repeating element upholds the Ganesh Pol's necessary symmetry.

Phase 3 Ornamental Culmination, (Figure 6)

The heritage site's cultural identity is covered in the last phase.

Polychromatic Painting: The model was detailed with the well-known fresco-style floral patterns, using the finished product in Figure 6 as a guide.

Ganesh Motif: The figure of Lord Ganesha, the main focus point, is painstakingly depicted above the lintel, indicating the gateway's function as the "Entrance of Good Omens."

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

Latticework (Jali): The finished model completes the transformation from an unfinished building to a cultural artefact by incorporating delicate screens in the upper-story windows.

Figure 3

Figure 4

Figure 5

Findings of the Research

Several important revelations about the sophistication of Rajasthani handicraft were revealed during the fabrication of the experimental miniature: According to the study's findings on structural optimisation, the Zarokha naturally serves as a "wind catcher." By transferring weight upward, the arch's mathematical design makes hefty stone structures appear light and "floating."

• Pigment longevity: Conventional mineral pigments pierce the substrate, in contrast to contemporary acrylics that are applied on top of a surface. According to the findings, a lithic bond that is resistant to fading brought on by prolonged exposure to UV light in desert settings is formed when lime and mineral oxides combine.

• Ergonomic Synchronisation: The study demonstrates that the craftsmen' "Hard Work" was a highly structured, rhythmic process rather than a brutal force. They used natural light to identify structural defects that would be undetectable under artificial lighting by aligning their operations with the sun.

Here in figure no 1,2,3,4 & 5 I am showing the miniature making prosses and in figure no.6 showing final output.

Figure 6

Future Scope:

This study may have an impact on contemporary sustainable practices. This study's future directions include:

• Sustainable Architecture: Using Jali's geometric designs in contemporary "Green Buildings" to passively cool spaces and lessen need on air conditioning.

• Restoration Science: Making sure that repairs don't interfere with the original materials, this study's pigment-making formulas can help restore deteriorating heritage havelis in an authentic manner. Before these unwritten mathematical

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 139-144 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/VCYH7444

formulas are lost to time, the digital archiving of oral maths aims to document the "mental geometry" employed by the few surviving traditional craftspeople.

• Eco-friendly Paints: Commercial, non-toxic, and biodegradable interior paints made by modifying mineral-and-gum binder formulations.

In conclusion:

A deep combination of art, science, and spirituality is shown by the experimental modelling used to examine Rajasthan's heritage structurally.

The inquiry demonstrates that the ancient craftsmen's "hard work" was backed by a profound, intuitive grasp of chemistry and mathematics. They used only handcrafted tools and the sun's rhythm to make permanent canvases (frescoes) and living respirators (Jalis) in addition to building walls. The findings of this study remind us that genuine "technology" is not found in the instruments we use, but rather in the accuracy of our thinking and the balance we maintain with our surroundings. Rajasthan's architectural heritage provides a blueprint for a sustainable future.

Refrence

1.Brown, P. (2010). Indian Architecture (Islamic Period). Read Books. (Original work published 1942).

Focus: Understanding the Indo-Islamic synthesis seen in the Ganesh Gate's arches and symmetry.

2.Giles, T. H. R. (2013). The Rajput Palaces: The Development of an Architectural Style, 1450-1750. Oxford University Press.

Focus: The evolution of the specific structural elements like Jharokhas and Chhatris used in Amer.

3.Jain, K., & Jain, M. (2000). Architecture of Rajasthan. Mapin Publishing.

Focus: Essential for documenting the specific materiality and cultural motifs of the region.

4.Michell, G. (1990). The Royal Palaces of India. Thames and Hudson.

Focus: Contextualizing the Ganesh Pol within the royal entryways of Rajasthan.

5.Stewart, S. (1993). On Longing: Narratives of the Miniature, the Gigantic, the Souvenir, the Collection. Duke University Press.

Focus: A theoretical look at how miniatures allow us to "possess" and understand large-scale history.

6.Tillotson, G. H. R. (1987). The Rajput Palaces: The Development of an Architectural Style. Yale University Press.

Focus: Detailed analysis of the architectural identity of the Kachwaha clan at Amer.

7.Sarkar, H. (2021). The Fresco tradition of Rajasthan: A study of the Ganesh Pol at Amer Fort. Journal of Heritage Studies, 12(2), 45-58.

Focus: Specific documentation of the painting and plastering techniques you are replicating.

8.Vyas, A., & Sharma, R. (2018). Materiality in Rajasthani Heritage: Stone, lime, and pigment. International Journal of Architecture and Design, 5(4), 112-125.

Focus: This supports your "Exploring Materiality" section regarding the physical substances of the fort.

9.UNESCO World Heritage Centre. (2013). Hill Forts of Rajasthan (Nomination Document). UNESCO. https://whc.unesco.org/en/list/247

Focus: Official documentation of Amer Fort's outstanding universal value and cultural identity.

10.World Monuments Fund. (2015). Conservation of the Ganesh Pol: A report on the restoration of Jaipur's heritage. WMF India.

Focus: Practical insights into the restoration of the frescoes, which informs your miniature's surface treatment.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/CHOD6178

3. LIVING TRADITIONS IN MOTION: PRESERVATION, TRANSMISSION, AND INNOVATION IN BISHNUPRIYA MANIPURI FOLK SONGS OF NORTH-EAST INDIA

Ashu Kanti Sinha[a]* Dr Rakesh Kumar[b]

[a] *Research Scholar, Department of Instrumental Music Faculty of Performing Arts BHU, Varanasi*

[b] Dr Rakesh Kumar, Supervisor, Department of Instrumental Music Faculty of Performing Arts BHU, Varanasi

[a]*Email: sinhaashukanti@gmail.com*

Abstract

This article examines Bishnupriya Manipuri folk songs as living cultural expressions within the framework of "living traditions," focusing on processes of preservation, intergenerational transmission, and adaptive innovation in North-East India. Rooted in the socio-cultural landscapes of Assam, Tripura, and adjacent regions of Bangladesh, Bishnupriya Manipuri song traditions encode collective memory, ritual cosmology, agrarian rhythms, and ethical values. Drawing on qualitative ethnographic methods, including participant observation, interviews with tradition bearers, and close reading of selected song texts, the study argues that these songs continue to thrive through oral transmission and community performance while also adapting to contemporary stages, recordings, and digital circulation. The article situates Bishnupriya Manipuri musical practices within broader regional folk ecologies of North-East India and within global debates on intangible cultural heritage. It demonstrates that preservation is most effective when embedded in everyday practice; transmission depends on relational pedagogy and linguistic continuity; and innovation enables cultural relevance without eroding inherited aesthetic cores.

Keywords: *Bishnupriya Manipuri; Folk Songs; Living Traditions; Oral Tradition; Cultural Memory; Intangible Cultural Heritage; North-East Indian Folk Culture; Ethnomusicology.*

---

* Corresponding author.

INTRODUCTION:

Folk music traditions in North-East India function as living archives of memory, identity, and ethical imagination. Among these traditions, Bishnupriya Manipuri folk songs encode migration histories, ritual cosmologies, agrarian rhythms, devotional sentiments, and communal ethics. Linguistic studies situate the Bishnupriya Manipuri community within layered historical processes of migration and contact, in which oral traditions function as repositories of collective memory (Sinha, Bishnupriya Manipuri Language; Grierson).

Ritual repertoires such as rain-invoking songs reveal how music is embedded within ecological knowledge systems and cosmological belief structures (Sinha, Seducing the Rain God; Kunga Thang). These practices reflect broader folk ecologies in North-East India, where tribal and non-tribal traditions intersect in shared ritual economies (Ghose). Regional cultural histories further demonstrate how Assamese cultural formations have shaped neighboring folk aesthetics and narrative idioms (Nath).

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/CHOD6178

As modernization, migration, and media homogenization reshape cultural ecologies, these song traditions face risks of language shift and declining intergenerational transmission. This article situates Bishnupriya Manipuri song traditions within the framework of "living traditions," emphasizing continuity through change (Hobsbawm and Ranger).

2. LITERATURE REVIEW:

Scholarship on North-East Indian folk cultures emphasizes oral tradition, performance ecology, and the role of elders and women in cultural transmission. Linguistic documentation of Bishnupriya Manipuri underscores the vulnerability of minority languages and the centrality of expressive traditions in sustaining linguistic identity (Sinha, Bishnupriya Manipuri Language; Grierson). Ethnographic studies of Manipur and Nagaland demonstrate that music and ritual function as social institutions rather than peripheral arts (Ghose).

Studies of ritual music highlight rain-invoking songs as sites where cosmology, ecology, and ethics converge (Sinha, Seducing the Rain God; Kunga Thang). Regional cultural histories further contextualize Bishnupriya Manipuri traditions within overlapping Assamese cultural patterns (Nath).

Studies of oral tradition emphasize performance as the primary site of cultural memory (Finnegan). Theorists of cultural memory argue that traditions encode collective remembrance and ethical imagination (Assmann). Ethnomusicological research stresses that musical vitality depends on sustained community performance rather than archiving alone (Nettl). Contemporary heritage policy highlights both the possibilities and risks of digital circulation for folk traditions (UNESCO).

3. METHODOLOGY:

This study employs qualitative ethnography through participant observation at community festivals and life-cycle rituals, interviews with elder singers, women performers, and youth practitioners, and close reading of selected song texts. The approach follows established ethnomusicological research practices that emphasize reflexivity, community consent, and performance-centered analysis (Nettl).

4. PRESERVATION: COMMUNITY MEMORY AND PRACTICE:

Preservation primarily occurs through oral transmission within families and neighborhood circles. Women act as custodians of lullabies, wedding songs, and ritual chants. Rain-invoking songs function as mnemonic devices embedding music within ecological and agricultural cycles (Sinha, Seducing the Rain God; Kunga Thang). Seasonal performances align repertoire with social time and collective memory (Assmann). Community workshops and inter-village gatherings support safeguarding through practice-based continuity (UNESCO).

5. TRANSMISSION: INTERGENERATIONAL PATHWAYS

Transmission is relational: apprentices learn through repetition, call-andresponse, and embodied participation rather than notation. Storytelling around songs anchors musical memory within lived experience (Finnegan). Linguistic continuity remains central to musical transmission, as song texts reinforce everyday language use and identity (Sinha, Bishnupriya Manipuri Language). Shrinking performance spaces and competing media consumption pose challenges, prompting community mentorship initiatives (UNESCO).

6. INNOVATION: ADAPTIVE CREATIVITY

Innovation manifests in staged performances, new accompaniment patterns, and digital circulation. Contemporary reinterpretations of ritual songs shift them into cultural showcase contexts (Sinha, Seducing the Rain God). Digital platforms extend audience reach while transforming aesthetics and pedagogy (UNESCO). Community norms continue to regulate authenticity, ensuring innovation remains anchored in inherited forms (Hobsbawm and Ranger).

7. DISCUSSION:

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/CHOD6178

Bishnupriya Manipuri folk songs demonstrate how living traditions negotiate continuity and change across linguistic, ritual, and regional cultural systems. Historical and ethnographic documentation situates these traditions within broader North-East Indian folk ecologies (Grierson; Ghose), while regional cultural histories reveal overlapping Assamese influences (Nath). Preservation thrives through everyday practice; transmission depends on mentorship and linguistic continuity; innovation sustains relevance without eroding core aesthetics (Nettl; UNESCO).

8. CONCLUSION:

These song traditions are dynamic practices shaped by custodianship and creativity. Sustaining them requires investment in intergenerational learning spaces, support for community cultural groups, and responsible digital dissemination grounded in community values (UNESCO; Nettl). Framing Bishnupriya Manipuri songs as living traditions foregrounds continuity through change rather than cultural loss.

WORKS CITED:

1. Assmann, Jan. Cultural Memory and Early Civilization: Writing, Remembrance, and Political Imagination. Cambridge UP, 2011.
2. Finnegan, Ruth. Oral Traditions and the Verbal Arts: A Guide to Research Practices. Routledge, 1992.
3. Ghose, G. K. Tribals and Their Culture in Manipur and Nagaland. 1982.
4. Grierson, Sir George A. Linguistic Survey of India. Vol. 3, Government of India, 1903–1928.
5. Hobsbawm, Eric, and Terence Ranger, editors. The Invention of Tradition. Cambridge UP, 1983.
6. Kunga Thang. "Me and My Manipuri Things: Boron Dahanir Ela (Bishnupriya Manipuri Rain Invoking Songs, 1450 A.D.)." 10 Apr. 2007.
7. Nath, Raj Mohan. The Background of Assamese Culture. 2nd ed., 1978.
8. Nettl, Bruno. The Study of Ethnomusicology: Thirty-One Issues and Concepts. 3rd ed., U of Illinois P, 2015.
9. Sinha, K. P. Bishnupriya Manipuri Language. Calcutta, 1984.
10. Sinha, Smriti Kumar. Seducing the Rain God. New Delhi, 2015.
11. UNESCO. Safeguarding of Intangible Cultural Heritage: Operational Directives. UNESCO, 2022.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/CHOD6178

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/NCXR5690

4. CINEMATOGRAPHY: THE IMPACT OF ITS EVOLVING NATURE ON THE CREATIVE VISION OF ARTISTS. (छायांकन: इसके बदलते स्वरूप का कलाकारों की रचनात्मक दृष्टि पर प्रभाव)

Dr. Harikesh Yadav [a]*

[a] Guest Lecturer, Department of Fine Arts, Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Lucknow

[a] *Email: hky55762@gmail.com*

Abstract

Contemporary photography has become an integral part of our daily lives. Anyone who uses a camera or a mobile phone acknowledges that the camera is no longer merely a tool but a medium for infinite creative possibilities. Introduced to the world in 1839 as a novel means of visual representation, photography astonished the art world. This new invention opened up fresh avenues for technical experimentation and discourse in the decades that followed. The evolving nature of photography profoundly influenced the creative perspectives of artists. Between 1800 and 1870, the impact of photography led to a significant decline in the production of portrait miniatures. During the 17th and 18th centuries, the 'camera obscura' was widely used for landscape depiction and drawing. Following World War I, certain Nabis artists began incorporating cameras and photographs directly into their art. This study presents a critical and in-depth analysis of the various aspects that play a pivotal role in understanding the impact of photography.

समकालीन छायांकन (फोटोग्राफी) हमारे दैनिक जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। प्रत्येक व्यक्ति जो कैमरा या सेलफोन का उपयोग करता है, वह इस तथ्य को स्वीकार करता है कि कैमरा अब केवल एक उपकरण नहीं बल्कि रचनात्मकता के अनंत संभावनाओं का माध्यम बन चुका है। 1839 ई. में छायांकन को दृश्य निरूपण के एक नवीन साधन के रूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जिसने कला जगत को चौंका दिया। इस नये आविष्कार ने आने वाले दशकों में तकनीकी प्रयोगों और विचार-विमर्श के लिए नये आयाम प्रदान किये। छायांकन के बदलते स्वरूप ने कलाकारों के रचनात्मक दृष्टिकोण पर गहरा प्रभाव डाला। 1800 ई. से 1870 ई. के मध्य छायांकन के प्रभाव के कारण लघु व्यक्तिचित्रों की सृजन संख्या में उल्लेखनीय कमी आयी। 17वीं और 18वीं शताब्दी में 'कैमरा ऑब्सक्युरा' का प्रयोग 'लैंडस्केप चित्रण' और 'ड्राइंग' के लिए बड़े पैमाने पर किया गया। प्रथम विश्व युद्ध के बाद कुछ नावि कलाकारों ने कैमरा और छायाचित्रों का सीधा उपयोग अपनी कला में करना आरम्भ किया। इसमें उन सभी पहलुओं का समीक्षात्मक और गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है जो छायांकन प्रभावों को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

Keywords: Photography, photograph, drawing, camera obscura, caricaturist, Nabis artists

छायांकन (फोटोग्राफी), छायाचित्र, ड्राइंग, कैमरा ऑबस्क्युरा, व्यंग्य चित्रकार, नावि कलाकार।"

---

* Corresponding author.

छायांकन एक महत्त्वपूर्ण विधा है, इसके प्रति लगभग प्रत्येक व्यक्ति की रुचि एवं जिज्ञासा होती है। यह एक सृजनात्मक एवं तकनीकी कार्य है, जिसके लिए अच्छी दृष्टि और आवश्यक उपकरणों की आवश्यकता होती है। आज व्यक्ति को अपने जीवन के लगभग सभी कार्यों के लिए छायांकन की आवश्यकता होती है तथा व्यक्ति इस तकनीक द्वारा बनाये गये छायाचित्रों को भावी पीढ़ी के लिए एवं अपनी स्मृतियों के रूप में संजोकर रखना चाहता है। छायांकन एक कला है जिसमें छायांकन करने वाले व्यक्ति की व्यक्तिगत दृष्टि, अनुभव, सृजन क्षमता, विषय-वस्तु से प्रतिक्रिया व्यक्त करने की दक्षता एवं स्वयं के विवेक पर निर्भर करता है और उसी के अनुसार परिणाम प्राप्त होते हैं। उदाहरण स्वरूप एक ही विषय-वस्तु की दस छायाकारों द्वारा छायांकन किया जायेगा तो उन सभी द्वारा लिये गये छायाचित्रों में विविधता होगी, जो उन सभी के विवेक एवं सृजन क्षमता पर निर्भर होगी। इसलिए छायांकन में

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/NCXR5690

उपयुक्त उपकरणों के साथ-साथ छायाकार का स्वयं का विवेक, अनुभव एवं सृजन क्षमता भी महत्त्वपूर्ण होते हैं। छायांकन के द्वारा ही वस्तु या व्यक्ति को, पास न होते हुए भी व्यक्ति उसे पहचानने लगता है तथा छायाचित्र को देखकर उसके बारे में महसूस भी कर सकता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र जैसे- पत्रकारिता, विज्ञापन, विज्ञान, राजनैतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक समारोहों, शिक्षा, खेलों एवं वैज्ञानिक कार्यों आदि अनेक क्षेत्रों में इस विधा का प्रयोग किया जाता है। छायांकन के आविष्कार से पूर्व यह कार्य चित्रकारों द्वारा चित्रों की रचना कर किया जाता था, जो जनसामान्य की पहुँच से बहुत दूर था। किन्तु छायांकन के विकास से अब यह कार्य जनसाधारण के लिए सस्ता, सुगम व सरल हो गया है।

छायांकन के बदलते सवरूप का कलाकारों की रचनात्मक दृष्टि पर प्रभाव की बात करें तो 1800 ई. से 1870 ई. के मध्य छायांकन के प्रभाव से लघु व्यक्तिचित्र कलाकृतियों की सृजन संख्या में बहुत कमी आ गई। व्यंग्य कलाकारों को व्यंग्यचित्र का नया विषय मिला गया। इस प्रकार कलाकार उन चित्रों का चित्रण करने लगे जो कैमरे से सृजित करना सम्भव नहीं था। कुछ छायाकारों ने वस्तुओं की अनूभूत गति को भी अपने छायांकन का विषय बनाया, जिसका प्रभाव उनके समकालीन कलाकारों, मार्शल द्युशां, बाला की कलाकृतियों में दिखाई देता है। कैमरा व छायांकन का प्रयोग नावि कलाकारों ने अपनी कला-कृतियों में किया। 1839 ई. में दुनिया को चैंका देने वाला दृश्य निरुपण के एक नए साधन छायांकन (फोटोग्राफी) की घोषणा की गई। जबकि छायाकारों ने स्वयं आने वाले दशकों को तकनीकों के साथ प्रयोग करने और इस नए आविष्कार के स्वरुप पर बहस करने में बिताया। आधुनिक समाज पर इसका प्रभाव बहुत अधिक सिद्ध हुआ।

वर्तमान में यह समझना मुश्किल हो सकता है कि आरम्भ में छायांकन कितना क्रांतिकारी और चुनौतीपूर्ण था, किन्तु जब इसने पहली बार दृश्य में कदम रखा तो कला जगत ने तुरन्त इस पर ध्यान दिया। जो एक प्रतियोगिता के रूप में शुरू हुआ और वह शीघ्र ही दूरदर्शी लोगों का एक संघ बन गया, जिसने हमारे देखने के तरीके को हमेशा के लिए बदल दिया। इसने कलाकारों, विशेष रूप से प्रभाववादी कलाकारों की दुनिया को देखने और वास्तविकता को चित्रित करने के तरीके को मौलिक रूप से बदल दिया। 1830 के दशक के अंत के पहले डाॅग्युरैटाइप प्रक्रिया और उसके बाद कागज पर छायाचित्रण संबंधी प्रिंट बनाने की तकनीकों की खोज हुई, जिसके बाद छायांकन व चित्रकला के बीच बहुत करीबी संबंध स्थापित हुआ। प्रभाववाद के कलाकार वास्तविकता की क्षणिक प्रकृति के बारे में गहराई से जानते थे और उनके लिए छायांकन अस्थायिता पर मनुष्य की प्रतीकात्मक जीत का प्रतीक लगता था और उनके चित्रण में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का शुरुआत करता था।

17वीं-18वीं शताब्दी के बीच 'कैमरा ऑब्सक्युरा' का प्रयोग ड्रॉइंग तथा लैंडस्केप चित्रण के लिए व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता था। इसका लाभ उठाने वाले कलाकारों की बहुत बड़ी सूची है। इनमें से मुख्य कलाकार, जोसफ वरनेट, गॉरडी, थाॅमस एंड पोल सैण्डबाई, लूदरबर्ग, जॉन क्रोम, थाॅमस गिरटिन, सैम्युअल प्रोट, डॉग्युरै व टैलबोट थे। लगभग अक्टूबर या नवम्बर 1839 ई. में रॉबर्ट कॉर्निलिस ने स्वयं का व्यक्तिचित्र डॉग्युरैटाइप प्लेट के लगभग चैथाई भाग पर लिया। यह पहला प्रकाश छायांकन था और यह व्यक्तिचित्र मानव इतिहास का सबसे पहला छायाचित्रण संबंधी व्यक्तिचित्र (चित्र सं.-1) है। इसके बाद कैमरे में कई संशोधन हुए और छायांकन का प्रभाव कलाकारों पर बहुत अधिक पड़ा। इसका सबसे अधिक प्रचलन उन वर्गों में हुआ जो तैल चित्र खरीदने में सक्षम नहीं थे। रिव्यू कॉमिक पत्रिका के निर्माता, कहानी लेखक एवं कार्टुनिस्ट 'नडार' ने छायांकन का भरपूर प्रयोग किया। उन्होंने अपने जान-पहचान के लोगों, मित्रों व रिश्तेदारों के व्यक्तिचित्र खींचे। छायांकन से उन्हें कार्टूनिंग में भी बहुत सहायता मिली। उनके द्वारा 1857 ई. में पेरिस के शवालयों में ली गई छायाचित्रण संबंधी दृश्य-श्रृंखला में कृत्रिम प्रकाश का प्रयोग किया। इसी वर्ष उन्होंने बड़े गुब्बारे से शहर के एरियल दृश्य छायाचित्र लेने प्रारम्भ किए थे। अन्य छायाकारों की तरह चेहरे की पूर्ण डिटेल के साथ छायाचित्र न लेकर वह 'धुंधला' ;थ्रूलद्ध छायाचित्र दृश्य लेते थे जो पूर्णतः फोकस किया हुआ नहीं होता था।

1850 ई. के प्रारम्भ में पहली फोटोग्राफिक सोसाइटी की स्थापना की गई। ''छायांकन निर्माण में प्रयुक्त साजो-सामान और समय ने कई व्यंग्य-कलाकारों को व्यंग्य-चित्रण का विषय भी प्रदान किया। प्रमुख व्यंग्य कलाकार दुमियर ;क्नउपमतद्ध, ग्रेन्डविले ;ळतंदकअपससमद्ध, नडार ;छंकंतद्ध, रुकसैक ;ब्तनपींदाद्ध व कुछ अन्य कलाकारों ने छायांकन विषय पर व्यंग्य-चित्रण किया। दुमियर ने 35 से अधिक लिथोग्राफ तथा ड्रॉइंग केवल छायांकन व्यंग्य विषय पर तैयार किया, जिनमें से छायांकन नामक लिथोग्राफ भी एक व्यंग्य कृत्ति है (चित्र सं.-2) थियोडोर हॉसमैन ने भी 'द अनहैप्पी पेन्टर' नामक व्यंग्यचित्र (चित्र सं.-3) छायांकन विषय पर बनाया।''

सर्गेई ल्वोविच लेवित्स्की ने 1847 ई. में कैमरे की फोकस प्रक्रिया में सुधार किया। सर्वप्रथम 'लेवित्स्की' ने अपने छायाचित्रों में परिवर्तनीय सजावटी पृष्ठभूमियों का प्रयोग कर इनसे जन-सामान्य को परिचित कराया। 1849 ई. में 'लेविस्की' द्वारा सृजित छायाचित्रों पर पेरिस की द्वितीय रिपब्लिक प्रदर्शनी में उन्हें स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। 1874 ई. में 'डी.एल.आर. मैडोक्स' ने जिलेटिन इमल्शन की खोज की। जिससे छायांकन को भरपूर योगदान प्राप्त हुआ।

'चाल्र्स बैनेट' द्वारा ड्राई प्लेट प्रोसेस की खोज 1880 ई. में की गयी। 'चाल्र्स' ने जिलेटिन, कैडमियम क्लोराइड व सिल्वर नाइट्रेट द्वारा ड्राई प्लेट बनाई। इस खोज के कारण ही छायांकन जन-जन तक पहुँच पाया और लोकप्रिय भी हुआ। अब किसी भी समय कहीं भी छायाचित्र खींचा जा सकता था,

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 148-153 (Total PP 05)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/NCXR5690

जो बाद में अन्धेरे कमरे में कभी भी डवैलप किया जा सकता था। जिलेटिन की खोज के कारण अब सेकंड के 1ध्25 वें भाग में छायाचित्र खींचा जा सकता था, जबकि इससे पहले छायाचित्र खींचने के लिए फिल्म को 5 से 15 मिनट का एक्सपोजर देना पड़ता था। 1888 ई. में 'डॉ. गुडविन' और 'जॉर्ज ईस्टमैन' ने रोल फिल्म और कोडेक कैमरा बनाया, जिसकी सहायता से छायांकन जन-जन तक पहुँचा। इस क्षेत्र में निरन्तर खोज व अनुसन्धान होते रहे, जिससे छायाचित्र प्रतिबिम्ब स्पष्ट, अतिशीघ्र व बेहतर बनाने में काफी सफलता मिली। साथ ही लेंस व कैमरे को अधिक उपयोगी व कारगर बनाया गया।

छायांकन के आविष्कार का प्रभाव लघु व्यक्तिचित्र कलाकारों पर बहुत अधिक पड़ा। 1800 ई. से 1870 ई. के मध्य इनकी कलाकृतियों की घटती संख्या से इसका पता चलता है। 1800 ई. में रॉयल अकादमी में 200 से ऊपर लघु चित्र प्रदर्शित हुए जबकि 1870 ई. में केवल 33 लघु चित्र ही प्रदर्शित हुए। 1893 ई. में इंग्लैण्ड के 'जॉन जौली' द्वारा रंगीन चित्र को नेगेटिव के माध्यम से प्राप्त करने की विधि खोजी गई। अब तक फोटो फिल्म को इतना विकसित कर लिया गया था कि एक सेकंड के हजारवें भाग में छायाचित्र ;च्ीवजवद्ध खींचा जा सकता था। 1853 ई. से 1874 ई. के दरम्यान 'कोरो' ने क्लिशेवेर ;ब्सपबीपअमततमद्ध प्रकार की अनेक छायाचित्र बनाया था। काँच की बनी नेगेटिव की आकृति पर कलम या तूलिका से काम करके या एचिंग की तरह उसे सूई से खुरचकर भी कलाकार अपनी इच्छानुसार रुपांतर कर सकते हैं। जो माध्यम की शुद्धता के आग्रही है वे मात्र साधन और रासायनिक मर्यादा में रह कर भी स्वतन्त्र सृजन या निजी अभिव्यक्ति कर सकते हैं।

1870 के दशक में पशु-पक्षी, मनुष्य आदि की प्रतिपल बदलती गतिमय अवस्थाओं और विविध प्रसंगों का छायाचित्र भी कैमरे द्वारा अंकित होने लगा था। एडवर्ड मायब्रिज नामक अमरीकी छायाकार ने गतिमान प्राणियों की एक ही गति के दरम्यान की विभिन्न अवस्थाओं की बारह या चैबीस की संख्या में श्रृंखलाबद्ध छायाचित्र तैयार किया था, जो 1878 ई. में 'ला नातुर' (प्रकृति) नामक पुस्तक के रूप में पेरिस पहुँची थी। तभी से देगा और उनके समकालीन कई कलाकारों की कृतियों में उक्त छायाचित्र के प्रभाव स्वरूप, क्षणिक अवस्थाएँ और लाक्षणिकताएँ भी दिखाई देने लगी। इसका प्रभाव फ्रेंच चित्रकार देलाक्रा के इस कथन में स्पष्ट रूप से प्रकट होता है- ''कुशल चित्रकार हम उसे भी कह सकते हैं जो किसी ऊँची इमारत की पाँचवी मंजिल से गिरते हुए आदमी का पूरा स्कैच उसके जमीन पर आने से पहले ही बना सकता है।''

'मायब्रिज' ने अत्यंत कम समय मे क्रमबद्ध छायाचित्र खींचकर वस्तुओं की गति के दरम्यान का जो हमारी आँखें नहीं देख सकती हैं, उस रुप को दिखलाया। कुछ वैज्ञानिक छायाकारों ने तो वस्तुओं के रुप, टैक्सचर, आकार जैसी चक्षुगमय लाक्षणिकता के स्थान पर उनकी अनुभूत गति को भी अपने छायांकन का विषय बनाया था। इस अनुभव छायांकन का प्रभाव हमें स्पष्ट रूप से तत्कालीन चित्रकार 'सूरों' की कृतियों में, 'मार्शल द्युशा'ं की पेन्टिंग 'न्यूड डीसेंडिग ए स्टेयर केस' में तथा 'सेवेरिनी बोचियोनी' व 'बाल्ला' आदि इटालियन भविष्यवादी कलाकारों की कृतियों में दिखता है। विश्वविख्यात पुस्तक 'आर्ट एण्ड फोटोग्राफी' के लेखक आरोन शार्फ के विचारानुसार, कंस्ट्रक्टिस्ट मूर्तिशिल्पी नॉम गाबो तथा घनवादी चित्रकारों पिकासो, ब्रॉक और पान ग्रीस की कृतियों में भी मारे के क्रोनो छायाचित्रों के पुनरावर्तित छायाचित्र का असर संभावित है। अतः छायांकन कला का दृश्य कला व कलाकारों पर अलग-अलग दृष्टिकोणों से प्रभाव पड़ा।

प्रथम विश्व युद्ध होने के बाद कुछ नावि कलाकार, कैमरा और छायाचित्र का सीधा उपयोग अपनी कला में करने लगे। उन कलाकारों में साल्वाडोर डाली, मोहोली नाज़ी, मान रे आदि के नाम अविस्मरणीय हो गए हैं। विश्वविख्यात कला संस्था 'बाउहाउस' से सम्बन्धित शिक्षक कलाकार मोहोली नाज़ी और उनके साथी कलाकारों ने भी कैमरा के बिना कई छाया-कृतियों को सृजित किया था।

छायांकन और कला दोनों ही एक दूसरे से काफी प्रभावित हुए। 1911 ई. में अनेक चित्रों में 'पिकासो' ने रैक्सीन व जाली के टुकड़े आदि चिपकाया था। शायद उससे छायाकारों को भी छायांकित स्वरूपों को कलम व तूलिका से स्याही व रंग लगाकर इच्छानुसार रूपांतरित करने की प्रेरणा प्राप्त हुई। इससे पहले भी ऐसा हो चुका था, लेकिन उसका मुख्य उद्देश्य छायाचित्र में से असुन्दर, विगत या अवांछित अंश को बदलना व दूर करना ही था, जैसे कि काले को गोरा और वृद्ध को युवा दिखाना अथवा छाया-प्रकाश का कठोर विरोधाभास कम करना। ये सब काफी कुशलता और चतुराई से किया जाता था कि छायाचित्र देखते समय इसका अंशतः ख्याल भी न आये। पिकासों के सहयोग से कला जगत में व्याप्त नई और मुक्त चेतना का प्रभाव छायाकारों पर भी पड़ा। छायाचित्र पर अभिव्यक्ति के लिए कलम या तूलिका से किया गया कार्य अब छिपाना आवश्यक मान लिया गया था। 'दादा कला आंदोलन' से जुड़े कलाकारों जैसे जॉन हार्टफील्ड, जॉर्ज ग्रॉस तथा मैक्स अर्नेस्ट ने वस्तु के स्थान पर उसके छायाचित्र के अंश लगाए। इन्हीं कलाकारों के माध्यम से छायांकन में युज़ेन आजे तथा मान रे जैसे छायाकार को सही समय पर जरूरी प्रोत्साहन भी प्राप्त हुआ था। कैमरे में नेगेटिव पर दो या अधिक बार किन्तु भिन्न वस्तु या परिस्थिति के छायांकन द्वारा या एक से अधिक नेगेटिव जोड़ कर बनाए छायाचित्र में पर्याप्त पूर्व नियोजित या आकस्मिक स्वरुप भी छायाकारों के प्रिय विषय बने। इसे छायांकन में मोंताज कहा जाता है। कोलाज, मोंताज के अलावा कुछ प्रचलित साधारण विधियां भी थीं।

आज छायांकन को इस स्थिति में पहुँचाने में अमरीकी छायाकार 'आल्फ्रेड स्टाइग्लिट्ज' की बहुत ही अहम भूमिका मानी जाती है। त्रिआयामी स्पेस का आभास कराने वाले स्टिरियोस्कोपिक छायाचित्र 1860-65 ई. से ही बनने लगे थे। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् कला की एक मुख्य विशेषता यह

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 145-147 (Total PP 03)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/NCXR5690

रही है कि कलाकार माध्यम की सीमा या बन्धन से मुक्त होकर छायाचित्र कला सहित विविध माध्यमों को आवश्यकतानुसार उपयोग में लाने लगे हैं। कला के तीनों प्रकारों जैसे चित्रकला, मूर्तिशिल्प एवं छायाचित्र में एक दूसरे का तथा छायांकन कला का प्रभाव देखा जा सकता है। छायांकन के बाद प्रचलित मुद्रण कला प्रकारों में असीम विकास होने लगा। कला-स्वरूपों की सृजन-प्रक्रिया में विद्युत संचालित यांत्रिक साधन अर्थात ऐरोग्राफ, स्प्रेगन, न्युमेटिक चीजल ड्रिल आदि सामान्य बनने लगे है। औद्योगिक स्तर की छपाई में अति सामान्य मानी जाने वाली छायाचित्रण संबंधी तकनीकों का उपयोग कलाकारों में भी लोकप्रिय होने लगा था। एंडी वॉरहोल, रोजनबर्ग, रॉय लिचेंस्टीन जैसे अमरीकी कलाकारों ने छायांकन पर आधारित स्क्रीन प्रिंटिंग का उपयोग अपने कैनवास चित्रों में किया था।

एक ब्रितानी कलाकार 'ऐलन जोन्स' थे, जिन्होंने 'लाइफ क्लास' तथा 'थ्रिल मी' शीर्षक की अपनी दोनों श्रृंखलाएं बनाई। इन श्रृंखलाओं में उन्होंने छापाचित्र में आधे भाग में व्यवसायिक छायाकार द्वारा खींची मॉडल की छायाचित्र को फोटो-ऑफसेट तकनीक से छापा। बाकी के आधे भाग में हाथ से बनाए पूरक अभिकल्प का प्रयोग किया है। 'टिल्सन' छायाचित्रों को ही विषय बनाकर छायाचित्रण संबंधी तकनीक के माध्यम से अपना छापाचित्र तैयार करते थे। कलाकारों की तरह कुछ अन्य मूर्तिकारों ने छायाचित्र की मदद से मूर्तिशिल्प भी बनाए। लकड़ी के घनाकारों पर चारों ओर छायाचित्र के श्रृंखलाबद्ध अंश चिपका कर 'रॉबर्ट दैनेकन' ने रचना की, क्योंकि दर्शक अपनी इच्छानुसार कला-कृति को विविध स्वरूप दे सकें। 'डगलस प्रिंस' ने पारदर्शक प्लास्टिक पर, क्षितिज से लेकर उसके पास तीन चार छायाचित्र छाप कर, छायाचित्र मंजूसा जैसी चैखट के अन्दर एक-दूसरे के बीच कुछ अंतर छोड़ कर छायाचित्र लगाये थे। ऐसी रचना और उससे निष्पन्न स्पेस दोनों त्रिआयामी थे। 'मारिसोल' की आदमकद शिल्प-रचना में रंगों और रेखांकन के उपरान्त छायाचित्र का विनियोग होता है तो डैल कार्टरमैन ने एक खड़ी हुई स्त्री की, उसके चारों ओर से खींचे छायाचित्रों को सही स्थान पर चिपकाया। इस तरह बनी त्रिआयामी मूर्ति के ऊपर उसी स्त्री की भिन्न समय तथा भिन्न स्थलों में ली गई निर्वसन और सवस्त्र मगर एक दूसरे से छोटी छायाचित्र चिपकाकर उससे कृति में समय का चतुर्थ-आयाम भी उत्पन्न किया गया।

अतः छायांकन की सहायता से कलाकारों ने कई नए कला आयामों को जन्म दिया। इस समय तक छायांकन कला व दृश्यकला बहुत अधिक घुलमिल गए थे। ''20वीं शताब्दी के 8वें दशक में छायांकन से प्रभावित फोटोरियलिज्म चित्रशैली का उद्भव हुआ। फ्रिट्स कथे, राबर्ट कटिंघम, रॉबर्ट बीचल और जेरार्ड रीचर आदि फोटोरियलिज्म चित्रशैली के प्रमुख प्रणेता रहे हैं।''

ईस्ट इण्डिया कंपनी के अंग्रेज अधिकारियों के साथ भारत में कैमरा का भी आगमन हुआ। 1850 ई. से 1860 ई. के दरम्यान मुम्बई तथा कोलकाता में तथा बाद के एक-दो दशकों में आगरा, लाहौर, बंगलौर आदि शहरों में कई व्यवसायिक तथा कुछ गैर-व्यवसायिक छायाकार सक्रिय हो चुके थे। पाश्चात्य छायाकारों के लिए अपने शिष्ट तथा तत्कालीन कला-स्वरुपों के प्रभाव से मुक्त रहना आसान नहीं था बल्कि असम्भव-सा था। भारतीय कला-परम्परा या उसके इतिहास से अपरिचित तत्कालीन भारतीय छायाकारों के सामने ऐसी कोई समस्या उपस्थित नहीं हुई।

कुछ छायाकारों ने छायांकन की श्वेत-श्याम सीमा का उल्लघंन छायाचित्र पर पारदर्शक रंगों से काम करके अथवा करवा के किया। रंगावरण के नीचे मुखाकृति की छाया-प्रकाश और टैक्सचर की खूबियां इससे छिपती नहीं थी। तब कुछ छायाकारों ने अपारदर्शक रंगों का प्रयोग करके छायाचित्र को एक नया ही रूप प्रदान किया और व्यक्ति के चेहरे को छोड़कर छायाचित्र में दृष्टिक्रम सहित बहुत सारी चीजें निकाली, बदली या लगा दी जाती (चित्र सं.-4) थी। चित्रकला और छायाचित्र का ऐसा सुन्दर समन्वय भारत में बाद के वर्षों में देखने को नहीं मिलता। प्रारम्भिक भारतीय छायाकारों की कृतियों की 'थ्रू द इंडियन आईज' शीर्षक से न्यूयार्क के इन्टरनेशनल सेन्टर ऑफ फोटोग्राफी में 1982 ई. में एक प्रदर्शनी लगायी गयी थी, जो वहाँ के कुछ अन्य बड़े नगरों में भी दिखायी गई। आरम्भिक भारतीय छायाकारों की कृतियों में प्रदर्शित शैली-जन्य पूर्वग्रहों से मुक्त चेतना का स्थान धीरे-धीरे विक्टोरियन पिक्टोरियलिज्म ने ले लिया। स्वयं स्फूर्त आयोजना, अभिव्यक्ति तथा विचारतत्व की अपेक्षा पूर्व-निर्धारित, रटी-रटायी छायाचित्र आयोजना का पुनरावर्तन हावी हो गया। इस सन्दर्भ से आज की औसत भारतीय छायांकन का हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। 1850 ई. के बाद लगभग 70 वर्षों के दरम्यान भारतीय छायांकन द्वारा बनाई हजारों सुन्दर, अद्वितीय और अत्यन्त महत्व की अप्रयाप्त कृतियाँ अब विदेशों के कला संग्रहों में पहुँच चुकी हंै तथा कबाड़ी और एंटीक डीलरों द्वारा बेची जाती रही हैं।

भारत के कुछ प्रसिद्ध छायाकार किशोर पारेख, रघुराय, रघुवीर सिंह, सतीश शर्मा, भूपेन्द्र, दशरथ पटेल, राघव कनेरिया, हुसैन, अजय दे, भवान सिंग, पाल्बो बार्थोलोम्यु, अश्विन मेहता, सत्येन, भरत नायक, होमाई व्यारावाला, दयानिता सिंह आदि हैं। इनके छायांकनों में सामाजिक, राजनीतिक तथा प्राकृतिक स्थितियों की अत्यन्त संवेदनशील और काव्यात्मक प्रस्तुति हुई है।

कृष्ण खन्ना, विवान सुन्दरम, विकास भट्टाचार्य, गीव पटेल, मीरा देवीदयाल, भूपेन खक्खर, परमजीत सिंह, गुलाम मोहम्मद शेख जैसे कलाकारों तथा अनुपम सूद, भास्करन, हरे कृष्ण बाग, पलनी अप्पन, कृष्ण अहूजा, शांतनु भट्टाचार्य तथा विनोद पटेल आदि ग्राफिक कलाकारों की पिछले 30-35

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 148-153 (Total PP 05)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/NCXR5690

वर्षों (1986 से पहले) की कला-कृतियों में छायांकन का प्रभाव दिखायी देता है। इन कलाकारों में से कुछ छाया-प्रकाश और उससे आभासित स्पेस के लिए छायाचित्र का सहारा लेते रहे हैं।

निष्कर्ष-

छायांकन ने विभिन्न कला आंदोलनों, दार्शनिक विचारधाराओं और सामाजिक परिस्थितियों को प्रभावित किया है। 19वीं शताब्दी के मध्य में छायांकन के आगमन से लघु व्यक्तिचित्रों की परम्परा में गिरावट आई, वहीं कलाकारों को नए विषयों की खोज में सहायता मिली। साल्वाडोर डाली, मोहोली नाज़ी और मान रे जैसे कलाकारों ने छायांकन को अपने रचनात्मक अभ्यास में शामिल कर इसे एक नई पहचान दी। इसके अलावा बाउहाउस जैसे संस्थानों में कैमरे के बिना भी कई छाया-कृतियों के सृजन का महत्वपूर्ण प्रयास किया गया, जिससे यह सिद्ध होता है कि छायांकन केवल यांत्रिक प्रक्रिया नहीं बल्कि एक गहरी कलात्मक संवेदना भी है।

भारतीय संदर्भ में भी छायांकन ने सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विमर्श को प्रभावित किया है। कृष्ण खन्ना, विवान सुन्दरम, विकास भट्टाचार्य, अनुपम सूद, हरे कृष्ण बाग, पलानीअप्पन और विनोद पटेल जैसे अनेकों कलाकारों की रचनाओं में छायांकन का गहरा प्रभाव देखा जा सकता है। इन कलाकारों ने छायांकन के द्वारा अपने समय की जटिलताओं, संवेदनाओं और अनुभवों को अभिव्यक्त किया है। अंततः छायांकन एक बहुआयामी विधा है, जिसने विज्ञान, कला, व्यवसाय और समाज के बीच सेतु का कार्य किया है। यह न केवल दृश्य निरूपण का माध्यम है बल्कि विचारों, भावनाओं और अनुभवों को अभिव्यक्त करने का एक प्रभावशाली उपकरण भी है।

संदर्भ-

1. यादव, नरेंद्र सिंह (तृतीय संस्करण–2013), फोटोग्राफी तकनीकी एवं प्रयोग, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
2. Scharf, A. (1974). Art & Photography, The Penguim Press : New York
3. Daval, J.-L. (1982). Photography: History of Art
4. From: http://en wikipedia.org/wiki/history_of_ photography
5. सरना, डॉ. एन. अप्रकाशित लेख
6. धुंधवाल, पी. (2016).''डिजिटल कला एवं तकनीक: दृश्यकला के क्षेत्र में योगदान व मनोवैज्ञानिक प्रभाव'' वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली
7. सिंह, ए. आर. (2005). फोटोग्राफी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम, कला दीर्घा, अंक–11
8. भट्ट, जे. (मई, 1986). फोटोग्राफी और अन्य उपकरणों का पारस्परिक सम्बंध, समकालीन कला

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

5. AMELIORATE THE FINE ART EDUCATION AND CURRICULUM WITH OUR PLURALISM ART EDUCATION AND POLICY: PRESERVING PLURALISM IN AN ERA OF GLOBAL STANDARDIZATION IN INDIA

Rohit Kumar Tushar[a]*

[a] *UG, Institute of Fine Arts, CSJM University, Kanpur.*

[a]*Email: tusharkumarrktrohit@gmail.com*

Abstract:

The rapid globalization of higher education and the expansion of the creative economy have significantly reshaped fine art pedagogy across the world. In India, these transformations have introduced research-oriented curricula, portfolio-based evaluation systems, digital platforms, and professional practice modules aligned with international standards. However, such global standardization often risks marginalizing India's rich pluralistic traditions, indigenous aesthetic philosophies, regional crafts, and multilingual art discourses. This research paper, *"Ameliorate the Fine Art Education and Curriculum with Our Pluralism,"* argues that the future of Indian fine art education lies not in imitation of Western institutional models but in the critical integration of global methodologies with India's civilizational aesthetic foundations. Drawing comparative insights from leading international institutions such as the Royal College of Art, Rhode Island School of Design, School of the Art Institute of Chicago, University of the Arts London, and Politecnico di Milano, this study examines structural strengths such as interdisciplinary research, critique-based studio culture, industry collaboration, and professional training. It proposes adapting these strengths within a pluralistic Indian framework that integrates indigenous aesthetic theory (such as Rasa), temple geometry, folk and tribal immersion, and multilingual scholarship alongside digital literacy and market skills to help improve Creative Economy.

The paper emphasizes the urgent need to enhance career opportunities for art students through structured professional practice education, including portfolio development, art pricing, contract literacy, grant writing, and digital branding. With the growth of online exhibitions and global art markets, communication skills and technological fluency have become essential components of artistic survival. The research also critically addresses the rise of Artificial Intelligence (AI) in creative fields. Rather than perceiving AI as a threat to creativity, the paper advocates its use as a research and analytical tool that can assist in art historical study, market analysis, and conceptual exploration while preserving human originality and ethical responsibility. By examining the practices of globally recognized Indian artists such as my

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

favourites Subodh Gupta, Jitish Kallat, Bharti Kher, Thota Vaikuntam and Anish Kapoor, the study illustrates how cultural rootedness can coexist with international engagement. Ultimately, this research proposes a policy-driven reform model that institutionalizes pluralism as the core principle of Indian fine art education, ensuring that tradition, technology, and global participation remain in dynamic balance.

Keywords: Fine art pedagogy, Pluralism, Globalization, Art Policy, Creative Economy, multilingual scholarship, indigenous, Artificial Intelligence (AI).

---

* Corresponding author.

1. Introduction

Globalization has reshaped art education through transnational academic standards, portfolio-based assessment, and market-oriented professionalization. In India, however, this shift often results in curricular homogenization that sidelines regional traditions, classical aesthetic theories, and community-based art practices.

India's artistic traditions from Ajanta frescoes to Mughal miniatures, from temple sculptures to folk crafts represent a pluralistic heritage that is unparalleled. Yet, in the era of globalization, art education risks being homogenized under Western-centric models. The challenge is to **preserve pluralism while embracing global standards**. This paper argues for a curriculum that integrates Indian cultural techniques, digital literacy, communication skills, and market-oriented training, ensuring that students are prepared for both local and global opportunities.

Indian fine art education has evolved from colonial art schools to modern institutions shaped by globalization. However, the standardization of curricula, market-driven approaches, and Western-centric art histories often marginalize India's indigenous knowledge systems and aesthetic philosophies.

India's artistic pluralism spanning classical sculpture, temple architecture, Mughal miniature, Pattachitra, Madhubani, Kalamkari, Warli, Gond, contemporary installations, digital media reflects centuries of layered cultural dialogue. Yet contemporary art education frequently privileges Euro-American theoretical frameworks.

The Sanskrit maxim from the *Rigveda* declares:

"आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः"

"Let noble thoughts come to us from every side."

This line offers a pedagogical foundation: openness to global knowledge without abandoning indigenous wisdom. This research argues that pluralism - intellectual, aesthetic, regional, and technological - must form the core of fine art education reform in India.

This paper examines how Indian fine art education can be ameliorated through structural reform, digital empowerment, and policy intervention while preserving pluralism.

2. Historical Foundations of Indian Art Education

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

Modern Indian art education emerged under colonial institutional frameworks such as the Government College of Art, Calcutta. Academic realism dominated early pedagogy, later challenged by modernists like M. F. Husain and S. H. Raza, who synthesized Indian symbolism with global modernism.

Scholars including Ananda K. Coomaraswamy (*The Dance of Shiva*) emphasized that Indian art is spiritual rather than merely decorative. Kapila Vatsyayan's *The Square and the Circle of the Indian Arts* illustrates the interconnectedness of Indian artistic disciplines - architecture, music, painting, sculpture and dance. Ancient texts such as: *Natya Shastra* (Bharata Muni), *Shilpa Shastra* and *Vishnudharmottara Purana* (Chitrasutra section). Demonstrate integrated approaches combining philosophy, proportion, ritual, and craftsmanship - an educational pluralism lost in many standardized curricula

3. Global Standardization and Comparative Institutional Models

Leading global art institutions provide valuable structural models: Globalization has brought: International credit systems, Portfolio-based evaluation, Market-aligned specializations, English-dominated theoretical discourse.

Institutions like **Royal College of Art** emphasize interdisciplinary research, innovation labs, and industry collaboration. **Rhode Island School of Design** integrates studio practice with liberal arts education. **School of the Art Institute of Chicago** promotes critical theory alongside experimental practice. **University of the Arts London** encourages entrepreneurial and curatorial exposure. **Politecnico di Milano** integrates design, architecture and engineering with industrial partnerships.

Observed Strengths Abroad:

Research-driven practice, Strong industry collaboration, Professional practice modules, Portfolio and exhibition training, Networking and global exposure, Foundation year models, Critique-based studio culture, international exchange and Market orientation. India can adapt these frameworks while embedding indigenous aesthetic studies, and regional immersion programs without sacrificing cultural diversity.

4. Curriculum Reform: A Pluralistic Model

Curriculum reform in Indian fine art education must move beyond superficial updates and embrace structural transformation grounded in pluralism. Pluralism here signifies the coexistence of diverse epistemologies, regional practices, aesthetic philosophies, technological innovations, and professional pathways within a unified pedagogical framework. Rather than replicating Western institutional models, Indian curriculum reform must synthesize indigenous knowledge systems with global academic rigor and contemporary digital competencies. A pluralistic curriculum must operate across five interrelated dimensions: epistemic integration, interdisciplinary learning, professionalization, technological literacy and community engagement.

A. Integrating Indian Knowledge Systems

Curriculum must include:

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

Study of Indian aesthetic theory (Rasa, Bhava), Temple iconography and geometry, Folk and tribal art immersion, Multilingual art historiography, Study of temple geometry and iconography, Field immersion in folk and tribal traditions, Multilingual art historiography

Students should experience field-based learning in artisan communities (e.g., Pattachitra in Odisha, Madhubani in Bihar).

B. Contemporary & Digital Integration

Modules should include:

Digital art and VR, NFT and blockchain literacy, Social media branding, AI tools for research and visualization, This balances heritage with future-oriented practice.

C. Interdisciplinary Studios

Inspired by RCA and RISD, Indian institutions can introduce:

Art + Ecology labs, Art + Technology labs, Art + Public Policy collaborations

Students should experience field-based learning in artisan communities (e.g., Pattachitra in Odisha, Madhubani in Bihar).

Such integration aligns with the concept of ***Swadharma*** ("one's own path") articulated in the *Bhagavad Gita*.

Explanation how it works-

4.1 Epistemic Integration: Re-centring Indigenous Aesthetics

Indian art education historically integrated philosophy, geometry, spirituality, and craftsmanship. Foundational texts such as the *Natya Shastra* and the *Vishnudharmottara Purana* (Chitrasutra) provide systematic approaches to proportion, symbolism, and aesthetic experience. Central to Indian aesthetics is the concept of **Rasa**, which positions art as an experiential and emotional process rather than merely formal representation.

A reformed curriculum must therefore: Introduce Indian aesthetic theory (Rasa, Bhava, Dhvani) as core theoretical modules, Study temple architecture, signs, and symbolic geometry, Integrate regional visual traditions such as Madhubani, Gond, Warli, Kalamkari, and Pattachitra.

Encourage multilingual scholarship and regional art historiography.

Such integration does not imply rejection of Western art history but its coexistence alongside Indian frameworks. Students should critically compare Renaissance perspective systems with Indian spatial symbolism, or modernist abstraction with Tantric geometry. This comparative pedagogy cultivates analytical depth rather than cultural hierarchy.

4.2 Structured Foundation Year

Inspired by global institutions such as the Royal College of Art and the Rhode Island School of Design, a mandatory Foundation Year should be introduced across Indian fine art colleges.

The Foundation Year may include:

Drawing and observational studies, Color theory and composition, Introduction to Indian and global art histories, Basics of digital tools and visual software, Critical thinking and writing skills, Study of Indian aesthetic philosophy.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

This stage ensures that students from diverse educational backgrounds begin with equal conceptual and technical grounding.

4.3 Interdisciplinary Studios and Research-Based Practice

Contemporary art increasingly intersects with ecology, technology, sociology, and public policy. A pluralistic curriculum must encourage interdisciplinary exploration.

Proposed modules:

- Art + Technology (AI, VR, interactive media)
- Art + Ecology (sustainability, environmental art)
- Art + Society (community-based practice, public art)
- Art + Design (collaborative projects with architecture and product design students)

Research-based studio practice where students document process, write reflective analysis, and engage with theory should replace purely output-driven assessment. This mirrors approaches at the School of the Art Institute of Chicago and the University of the Arts London, where conceptual clarity is as important as technical execution.

4.4 Professional Practice and Art Market Literacy

One of the greatest gaps in Indian fine art education is the absence of structured career training. A pluralistic model acknowledges that artistic sustainability requires economic literacy.

The curriculum should include:

Art market studies (auction systems, galleries, biennales), Portfolio development and digital presence, Pricing strategies and valuation methods, Contract law basics, Grant writing and residency applications, Exhibition planning and curatorial practice, Students must graduate not only as creators but as informed cultural entrepreneurs capable of navigating global, and local art economies.

4.5 Digital Literacy and AI Integration

Technological fluency is essential in contemporary art education. However, digital modules should complement, not replace traditional studio practices.

Key inclusions: Digital illustration and animation, 3D modelling and visualization, NFT and blockchain awareness, AI-assisted research and concept development, Ethical use of generative technologies, AI can support art historical research, translation, trend analysis, and conceptual brainstorming. By teaching students how to critically evaluate AI outputs, institutions empower them to use technology responsibly while maintaining originality.

4.6 Community Immersion and Cultural Fieldwork

Pluralism must be experiential. Students should participate in: Rural artisan workshops, Craft cluster documentation projects, Collaborative murals or public art initiatives, Oral history recording of traditional artists. This engagement strengthens cultural empathy and prevents academic detachment from living traditions. Community immersion and

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

cultural fieldwork are essential pillars of a pluralistic fine art curriculum in India. While institutional studio practice offers technical refinement and conceptual development, it often remains disconnected from the living artistic traditions that form the backbone of India's cultural landscape. A pluralistic model insists that students engage directly with artisan communities, regional craftspeople, indigenous visual languages, and vernacular knowledge systems. Such engagement transforms art education from a classroom-bound activity into a dialogic, experiential process rooted in social reality.

1. Philosophical Rationale

Indian art traditions have historically flourished within communities rather than isolated studios. Temple sculptors, miniature painters, textile artisans, and folk artists worked within guild systems where knowledge was transmitted orally and practically. The *Shilpa Shastra* and other treatises did not function independently of lived practice. Therefore, community immersion reconnects students to the original pedagogical environment of Indian art learning through participation, observation, and shared experience.

This approach also resonates with Rabindranath Tagore's educational philosophy at Santiniketan, where nature, rural life, and craft traditions were integral to artistic growth. Art, in this sense, is not merely aesthetic production but social interaction and cultural continuity.

2. Objectives of Cultural Fieldwork

Community immersion should aim to: Develop cultural sensitivity and ethical awareness, Bridge the gap between "fine art" and "craft" hierarchies, Preserve endangered regional traditions through documentation, Encourage collaborative learning rather than extractive research, and Provide inspiration rooted in local materiality and symbolism

Students exposed to living traditions such as Madhubani, Gond, Warli, Kalamkari, or Pattachitra gain insight into symbolism, natural pigments, narrative storytelling, and community-based production models.

3. Structure of Immersion Programs

A structured model for community immersion may include:

a. Short-Term Field Visits (1–2 Weeks)

Students visit craft clusters, observe techniques, document processes, and conduct interviews. Reflection journals and visual diaries should be mandatory.

b. Semester-Long Residency Programs

Students collaborate with artisan communities to co-create works or reinterpret traditional motifs through contemporary mediums.

c. Documentation Projects

Students may record oral histories, map iconographic systems, or create digital archives of traditional practices. This also builds research and communication skills.

d. Community-Based Public Art

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

Collaborative murals, installations, or exhibitions involving local participants can create reciprocal exchange rather than one-sided observation.

4.7 Communication and Critical Writing

Global participation requires articulation. Curriculum reform must mandate:

Artist statement writing, Academic research papers, public presentation skills, Multilingual engagement, Visual storytelling, Effective communication bridges creativity and opportunity.

5. Enhancing Career Opportunities & Art Market Skills

Indian art graduates often face limited structured career pathways. Reform must include:

A. Professional Practice Training

Contract writing, Gallery negotiation, Art pricing strategies, Grant writing

Reference: Don Thompson's *The $12 Million Stuffed Shark* (art market analysis).

B. Digital Platform Literacy

Students must learn: Portfolio building (Behance, personal websites), Social media marketing, Online exhibitions, Digital communication strategy.

C. Communication & Language Skills

Fluency in: English (global communication), Regional languages (local outreach), Visual storytelling, public speaking, artist statements, and proposal writing should be mandatory modules.

D. Entrepreneurial Incubation

Colleges can establish: Art incubators, Startup mentorship programs and Collaboration with design firms.

6. Learning Models in Foreign Fine Art Colleges

At Royal College of Art

Emphasis on postgraduate research, Studio critique culture and Cross-disciplinary collaboration.

At Rhode Island School of Design

Strong foundation year, Liberal arts integration and Rigorous portfolio reviews.

At School of the Art Institute of Chicago

Conceptual thinking emphasis and independent study options

At University of the Arts London

Industry placements, Global networking opportunities

At Politecnico di Milano

Design innovation + technical rigor, Industry partnerships

Indian institutions can adopt:

✓ Foundation year

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

✓ Internship requirement

✓ Global exchange programs

✓ Research publication modules

7. AI in Art Education: Threat or Opportunity?

AI is often perceived as diminishing creativity. However: We can use AI in Art Education: Augmentation, not its Replacement.

Constructive Uses:

Art history research assistance, Trend forecasting, Reference generation, Language refinement, enhance language clarity, Provide global market insights and analysis

AI should be taught as:

A research assistant and data analysis, A brainstorming tool, A time-saving technology

Creativity remains human-driven. AI augments, not replaces, imagination.

AI should function as a research assistant rather than a creative substitute. Ethical AI training must be integrated to ensure originality and intellectual ownership.

8. Contemporary Indian Global Artists as Role Models

Students can seek inspiration from: **Subodh Gupta** – global installation practice, **Bharti Kher** – conceptual hybridity, **Anish Kapoor** – monumental global presence, **Raqs Media Collective** – research-driven art, **Sabyasachi Mukherjee** – cultural branding.

Their careers illustrate: Global networking, Cultural rootedness, Market intelligence.

9. Policy Recommendations

- Establish National Art Education Reform Committee
- Integrate AI literacy into syllabus
- Mandatory rural-art immersion programs
- Government-funded international exchange
- Digital archive development
- Art entrepreneurship labs in colleges.

10. Philosophical Foundation of Our Indian Pluralism

The Bhagavad Gita states:

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः"

"Better to die in one's own dharma."

Pluralistic education respects diverse artistic dharmas - folk, tribal, classical, digital, conceptual.

Rabindranath Tagore in *Towards Universal Man* envisioned education that is rooted yet universal.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 154-162 (Total PP 09)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/LNTS5552

Pluralism in art education means: No single aesthetic dominance, Inclusion of marginalized traditions, Openness to global dialogue.

Conclusion

To ameliorate fine art education in India, reform must balance:

Cultural preservation, Global competitiveness, Market literacy, Digital proficiency, AI adaptability.

India does not need imitation of Western models, but adaptation through pluralism. The future of Indian art education lies in synthesizing ancient philosophy, contemporary innovation, and global engagement.

By integrating interdisciplinary curricula, digital platforms, entrepreneurial skills, AI literacy, and cultural rootedness, Indian fine art institutions can empower students to thrive globally while sustaining India's artistic diversity.

Pluralism is not resistance to globalization; it is the intelligent negotiation of identity within it.

References

1. Coomaraswamy, Ananda K. *The Dance of Shiva: Essays on Indian Art and Culture*. Dover Publications, 1985.
2. Don Thompson. *The $12 Million Stuffed Shark: The Curious Economics of Contemporary Art*. Palgrave Macmillan, 2008.
3. Gombrich, E. H. *The Story of Art*. Phaidon Press, 1995.
4. Tagore, Rabindranath. *Towards Universal Man*. Asia Publishing House, 1961.
5. Vatsyayan, Kapila. *The Square and the Circle of the Indian Arts*. Abhinav Publications, 1997.
6. Bharata Muni. *Natya Shastra*. Translated editions various.
7. *Vishnudharmottara Purana* (Chitrasutra section). Various translations.
8. Ministry of Education, Government of India. *National Education Policy 2020*. Government of India, 2020.
9. Royal College of Art. Academic Programme Documentation. London, UK.
10. Rhode Island School of Design. Academic Curriculum Handbook. Providence, USA.
11. School of the Art Institute of Chicago. Undergraduate and Graduate Curriculum Guides. Chicago, USA.
12. University of the Arts London. Programme Specifications and Industry Engagement Reports. London, UK.
13. Politecnico di Milano. School of Design Curriculum Framework. Milan, Italy.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

6. INDIAN PERFORMING ART IN THE GLOBAL ARENA: BODY, RITUAL, AND IDENTITY - A PATHWAY TO ĀNANDA...

Radhika Gowardhan[a]* Prof. Dr. Jagdish Khaire[b]

[a] *Research Scholar – Sir J. J. School of Art, Architecture and Design.*

[b] *Dean Sir J. J. School of Design.*

[a]*Email: rmgowardhan99@gmail.com*

Abstract:

Dance is one of the earliest and most fundamental modes of human expression, emerging alongside the evolution of humanity as a means of communicating emotion, rhythm, and experience through the body. From spontaneous movement to structured forms, dance has developed across cultures.

The recurring presence of dance in social and cultural celebrations underscores its role in expressing joy, unity, and shared emotional states. Classical Indian dance forms introduce an additional dimension to this expressive function through their highly structured frameworks of rhythm, gesture, and narrative progression. Rooted in codified systems such as the Nāṭya Śāstra, these forms guide the practitioner through graduated levels of learning that extend beyond technical proficiency. Physical discipline, cognitive engagement, emotional awareness, and ultimately spiritual experience. Through sustained practice, the dancer transitions from conscious execution to subconscious embodiment, where movement becomes an extension of inner awareness and cultivated muscle memory.

Indian classical dances have established a significant presence in the global arena, serving as cultural ambassadors that bridge traditional Indian philosophy with international audiences. These art forms are increasingly recognized worldwide for their intricate storytelling, and spiritual dimensions. While rooted in traditional scriptures (Nāṭya Shastra), modern practitioners are blending classical techniques with contemporary elements, a trend often seen in globalized interpretations.

At this advanced stage, dance transcends performative boundaries and becomes a meditative and transformative experience, culminating in the state of Ānanda—a profound joy characterized by the harmonious alignment of body, mind, and spirit. Ānanda is not merely an emotional response but a heightened state of consciousness in which the individual experiences unity with the larger cosmic rhythm. This paper examines dance as a holistic practice

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

that integrates fluid emotional expression, embodied mindfulness, and spiritual awareness, positioning classical dance as a pathway toward self-realization and oneness with the universe, thus attaining Ānanda.

Keywords: Classical Indian Dance, rhythmic expression, Nav rasas, Global Arena, Ānanda: Body–Mind–Spirit Integration

---

* Corresponding author.

Most of the references to this paper related to dance are taken from '*The Natya Shastra*', is the foundational text of Indian performing arts. Comprising around 36 chapters, it systematically codifies drama, dance, music, stagecraft, hand gestures, expressions, body movements, and the theory of rasa (aesthetic emotion). It is regarded as the origin of all major classical Indian dance traditions because it provides their theoretical and technical framework. Indian classical forms such as Bharatanatyam, Kathak, Odissi, and Kathakali draw their principles of movement, expression, and aesthetics directly from this seminal treatise.

There are 8 classical dance forms in India Bharatanatyam, Kathak, Odissi, Kathakali, Kuchipudi, Manipuri, Mohiniyattam, and Sattriya.

Uday Shankar was a pioneer Indian dancer and choreographer recognized as the 'Father of Modern Dance' in India. He created a unique globally popular fusion style, blending Indian classical, folk and tribal dances with European theatrical techniques (deeply impressed with ballet style of dancing). He established the first modern dance center in India (*Kathak Shashtra Darshan*) and pioneered the use themes, lighting and stage design's work sought Ānanda - a term often translated as "blissful joy" - in multiple ways:

· Through synthesis of movement and emotion: dancers weren't just performing steps but expressing internal moods and stories.

· Through spiritual uplift: audiences in the West and India alike found his work both visually captivating and emotionally resonant, blending aesthetics with expressive meaning.

· He saw dance as more than entertainment — as a way to elevate human feeling and connect people beyond cultural boundaries. He was inspired by classical style but formed his own style by removing the rules of classical dancing and keeping it more free flowing.

Legacy: The Global Stage

Shankar's philosophy was NOT to transplant a specific Indian classical form abroad, but to liberate the expressive potential of Indian movement and present it in a way that resonated with global audiences. Uday Shankar was a student of J.J. School of arts and passed out in the year 1917 and passed out from Royal college of Arts, London, in the year 1920 (*Kathak Nritya Shiksha*). He extensively toured Europe and U.S. and presented Indian classical dance inspired performances.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

His unique dance style influenced a generation of Indian artists who later carried elements of his style into various forms including classical training, choreography, film, and theatre.

Thus, Uday Shankar bridged Indian classical aesthetics with a global stage by creating a unique fusion-oriented expressive dance. He integrated Western theatrical structure, Indian emotional grammar (navarasas), and a vision of shared affective experience — crafting performances that conveyed joyful, transcendent ananda beyond regional form boundaries. His initiatives (troupe tours, institutions, choreography) laid a foundation for what we now call Indian Contemporary Dance.

Sadhguru

Dance as an Expression of Life and Spirituality

Dance Reflects Cosmic Rhythms

Sadhguru often uses the image of dancing as a metaphor for life and creation — especially in the Nataraja concept, where the cosmic dance signifies the dynamic, interconnected rhythm of existence. This isn't just physical movement, but a symbol of the harmony between the individual and the universe.

Play, Movement and Inner Freedom

At the **Isha Yoga Center**, movement, dance, singing and playful activities are encouraged — not merely as entertainment but as ways to loosen the body and mind, break rigidity, and invite a more alive, responsive inner state that supports spiritual openness.

In Celebrations Like Mahashivratri

During events such as the all-night Mahashivratri celebrations, people spontaneously dance, sing and stay immersed for hours. This physical engagement is seen as a way of

rising above ordinary physical resistance, helping participants remain alert and receptive to deeper inner experiences throughout the night.

Dance & Joy Are Not Just External

Sadhguru makes a distinction between expressed joy (like dancing, singing, laughing) and innate bliss that comes from inner freedom — ānanda. According to his guidance, outward expression (dance, music, celebration) can be an opening, but real bliss doesn't depend on external forms — it can arise even in silence or stillness.

Emotion as a Gateway, Not the Goal

Emotional experiences — whether joy, bliss, laughter, or even tears — are seen as responses of the system, not the core of spiritual transformation. True emotional freedom is being responsive without being ruled by emotions.

Ānanda — Inner Bliss and Spiritual Fulfilment

What Ānanda Means

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

In Sanskrit and traditional Indian thought, ānanda literally denotes bliss or deep joy — often described as a state of inner completeness or union, beyond ordinary pleasure or emotional ups and downs. In spiritual contexts, it points to a deep, abiding experience of life that is not contingent on external highs.

Ananda Alai — "Wave of Bliss" Program

Isha Foundation offers programs called Ananda Alai ("wave of bliss"), which are meant to help people deepen their spiritual experience and sustain joy through guided practice after completing foundational experiences like Inner Engineering. These programs emphasize ongoing spiritual sadhana, meditation and inner awareness rather than outward expressions alone.

Bliss Beyond Activities

Sadhguru clarifies that ānanda isn't the same as tangible forms of enjoyment — like dancing or music — though such activities can release tension and elevate mood

temporarily. Instead, ānanda is an internal state linked to clarity, peace and freedom from inner resistance, attainable through disciplined spiritual practice.

How Dance, Emotion, and Ānanda Fit Together

Aspect	Role in Isha/Sadhguru Teachings
Dance	A means of expression and a way to break rigidity, engage the body-mind, and open to inner states.
Emotion	A response, not the ultimate goal. Emotional engagement can be transformative but isn't equated with spiritual bliss itself.
Ānanda (Bliss)	A deeper inner state of joy and peace that transcends external expression — accessible through meditation, awareness and inner transformation.

In Essence

Dance and celebration in the Isha context are not just cultural or recreational — they are participatory tools that help loosen the mind-body and allow deeper receptivity. He also mentions "Shiva is not a person but a possibility. The Adiyogi is a symbol of the ultimate stillness and the ultimate dance" in his book (*Adiyogi – The Source of Yoga)*.

· Emotion shows you are alive to your experience, but Sadhguru's emphasis is on not being driven by emotion.

· Ānanda in this framework is sustained, self generated bliss — the inner experience of wellbeing and presence that isn't dependent on external events,

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

sensations, or activities.

Osho and Dance

Dance was not peripheral in Osho's vision — it was central to his understanding of meditation, celebration, and transformation. For Osho, dance was not performance but a doorway to ego lessness and ecstasy.

Dance as Meditation

Osho developed several active meditation techniques where intense movement and dance precede silence.

Dynamic Meditation

· Begins with chaotic breathing and catharsis.

· Followed by jumping and energetic movement.

· Culminates in stillness and silence.

· The idea: exhaust the body and emotions so the mind drops naturally. For Osho, dance was preparation for meditation — not separate from it.

Dance as Ego lessness

Osho often said: "When the dancer disappears and only the dance remains, that is meditation." The emphasis was not on technique or choreography, but:

· Losing the self

· Letting movement happen

· Entering a state of flow

This connects closely with the idea of ego dissolution — when the "doer" drops and pure experiencing remains.

Dance, therefore, symbolized: Acceptance of the body, Emotional release, Joy without guilt and Spirituality integrated with sensual aliveness

Emotional Purification Through Dance

Unlike traditional silent meditation paths, Osho believed modern humans carry suppressed emotions. Dance was a safe way to:

· Release anger, grief, joy

· Break psychological conditioning

· Move beyond repression

Once emotional energy was expressed, deeper silence became accessible.

Dance and Ananda (Bliss)

Though Osho used the term bliss frequently, he distinguished:

· Pleasure (temporary)

· Joy (emotional)

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

· Bliss (existential state)

For him, dance could lead to bliss if it became total — when you are so absorbed that the mind disappears. Bliss was not the dance itself — it was the state beyond the dancer.

Thus, For Osho:

· Dance is meditation in movement, a therapy for emotional repression, a pathway to egoless awareness, a spiritual experience when the dancer dissolves *(The Book of Secrets)* and finally leading to a state when one is celebrating LIFE!!!

The nine emotional states, are fundamental to Indian classical dance, serving as a pathway to **Ananda** (divine bliss or supreme consciousness) by transforming personal emotions into universal aesthetic experiences. Through expression and pure dance, dancers evoke these states—ranging from love to serenity—to transcend the ego and achieve a state of spiritual tranquillity, both for the performer and the audience.

The Nine Rasas (Emotions/Sentiments) in Dance

1. **Shringara (Love/Beauty):** Devotion and romance - Expresses romance, affection, devotion, harmony.

- Daily life: Loving parents, romantic relationships, devotion to God, appreciation of beauty in nature or art.

2. **Hasya (Joy/Laughter):** Humour and mirth. Expresses humour, lightness, playfulness. - Daily life: Laughing with friends, enjoying a funny situation, playful teasing.

3. **Karuna (Compassion/Sorrow):** Empathy and pathos. Expresses sadness, empathy, sympathy.

- Daily life: Feeling moved by someone's suffering, loss of a loved one, helping someone in pain.

4. **Raudra (Anger/Fury):** Outrage and destruction. Expresses anger, rage. - Daily life: Anger and frustration.

5. **Veera (Heroism/Courage):** Valor and confidence. Expresses bravery, determination, confidence.

- Daily life: Standing up for truth and facing challenges.

6. **Bhayanaka (Fear/Terror):** Anxiety and dread. Expresses dread, nervousness, insecurity.

- Daily life: Fear of failure, fear for loved ones' safety, uncertainty.

7. **Bibhatsa (Disgust/Aversion):** Repulsion. Expresses revulsion or moral dislike. - Daily life: Dislike toward unethical behaviour, unpleasant smells or sights.

8. **Adbhuta (Wonder/Amazement):** Awe and curiosity, astonishment, expresses curiosity, awe, surprise.

- Daily life: Watching a beautiful sunrise or sunset, surprise on something magnificent.

9. **Shanta (Peace/Tranquillity):** Serenity and contentment, added as the ninth rasa to represent total calm. In Indian classical dance—especially guided by the Natya Shastra attributed to Bharata Muni—the concept of Navarasa (Nine Rasas) forms the emotional and aesthetic foundation of performance. Rasa literally means "essence" or "flavour," referring to the emotional experience relished by the audience. Expresses spiritual calm, detachment, contentment.

- In daily life: Meditation, prayer, silent reflection, moments of deep satisfaction.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

Thus, dance is a mirror of life. The performer internalizes these emotions and transforms them into aesthetic experience. The spectator, in turn, experiences emotional purification—similar to catharsis—through rasa.

In classical Indian philosophy, the journey through Navarasa ultimately leads toward Shanta Rasa, symbolizing balance and inner bliss (Ānanda).

Attainment of Ananda (Bliss) Through Dance

1. **Transcending the Self:** Through dedicated practice (Sadhana), a dancer, such as in any classical dance form, immerses themselves in these emotions. The process shifts focus from the personal "I" to the universal emotion, causing the ego to dissolve.

2. **Emotional Catharsis:** By fully exploring and expressing even negative emotions (like anger or fear) within the safe framework of art, the dancer and audience experience a cleansing, resulting in inner calm.

3. **Navarasa Sadhana:** Specific training in Navarasa uses breath control and focused, intense concentration to evoke these states deeply, leading to a state of *tanmayibhavana* (total immersion).

4. **Connecting to the Divine:** The culmination of these emotional experiences is *Shanta* or *Ananda*, where the mind becomes still, creating a profound, meditative state that is considered an encounter with the divine.

In the Indian aesthetic and spiritual tradition, Shanta and Ānanda describe profound inner states that arise when the soul (Ātman), mind (Manas), and body (Sharīra) are in harmony.

Shanta – The State of Deep Inner Peace

Natyashastra describes Shanta Rasa as the rasa of tranquillity — the culmination of all emotional experiences into stillness.

When soul, mind, and body are aligned:

· The mind is free from agitation.

· The body is relaxed yet alert.

· The soul rests in awareness of its true nature.

Shanta is not mere silence; it is dynamic equilibrium.

It is the feeling after intense emotion has dissolved — like the quiet sky after a storm. In classical Indian dance (especially in Kathak or Bharatanatyam), Shanta is expressed through:

- Soft gaze (Drishti), Subtle breath awareness, Minimal movement, Gentle abhinaya that transcends drama. It reflects detachment (vairagya) and inner completeness.

Research

A questionnaire was made and circulated within various dance students, performers and Dance teachers and requested to give their views through video recordings, one of the video recordings has been answered like an interview. Most of the respondents have given videos, as requested. However, a few of them have written answers to the questionnaire.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

Distribution – Based on Dance form (from the respondents)

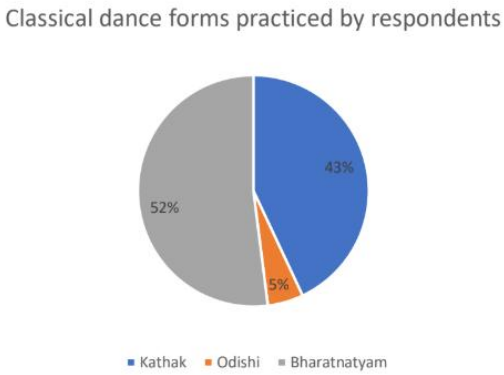

Analysis of the research done -

- Have been able to get a wide age group of respondents from age **18 to 65** years.

- All of them are females.

- Most of the respondents are practicing Bharatnatyam (52%), Kathak (43%) and Odissi (5%). While one respondent who practices Bharatnatyam also experiments in Mohiniyattam (included in Bharatnatyam) as that is her primary dance form). Another respondent also practices Bharatnatyam and Odissi (has been included in Bharatnatyam as she has completed Arangetram (traditionally first stage performance in Bharatnatyam).

- The dancers feel connected to our culture (Indian mythology and Gods) and also deep connection with their Guru, students and fellow students and ultimately with the audience.

- The young dancers have been enrolled by their mothers at a very early age as low as 4+, while there are others who have started at a mature age of 50+.

- On a physical level, a dancer experiences a surge of energy, forgetting physical pain (if any), and feeling energetic. There an experience of dopamine release (happy hormone) after practicing/performing dance.

- On an emotional level, there is a deep connection between them and dancing. They have described the connection as joy, peace, a stress buster and pure bliss. They feel happy and 'alive', as of it's their 'best self'.

- On a spiritual level, especially the dancers who belong to a mature age group have described their relationship with dancing as Spiritual, Moksha, surreal experience, divine experience and sacred bond. The younger dancers have mentioned that they fell satisfied after dancing. Some of them felt a 'connect with higher force'.

- When asked on their motivation to dance/perform it has been like channelising their emotions, storytelling connect with audience

- Other aspect of dancing came out that it was an endless process with so many pieces to perform in different ragas, taals and different laykari (speed of

performing). Adding to the numerous mythological stories that our rich culture has to offer.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

- There are phrases like fuel for the body, unbreakable bond between body, mind and soul with dance and they wish to be connected with dance till their last breath.

- All of the respondents mentioned in different ways that they would feel a void, an emptiness and a feeling of missing something, incomplete, if, dance was removed from their life.

- Love for dance is 2 Es Eternal and Ever growing. And Dance = 3Ds Determination, Dedication and Devotion...

- 2 respondents have quoted a Sanskrit Shloka from Natya Shastra

"Yatho Hastas-Tatho Drishti Yatho Drishti-Statho Manaha

Yatho Manaha-Tatho Bhaava Yatho Bhaava Tatho Rasaha

The meaning of the above is where the hand goes, the eyes follow. Where the eyes go, the mind follows. Where the mind goes expressions and emotions follow. And where there is expression, sentiment/flavour is invoked. This verse is fundamental for any classical dance. It simply deciphers that the physical

movement of the hands ultimately aligns with sentiments and emotions to create a meaningful performance.

- Each and every person stated that Dancing does lead to **Ānanda** in their Life!!!

Ānanda – Bliss of truly Unified Being

Ānanda is the innermost sheath of existence — Anandamaya Kosha — the bliss layer of being. When soul, mind, and body align:

· The mind becomes transparent (no conflict).

· The body becomes an instrument, not a burden.

· The soul shines unobstructed.

Ānanda is not excitement or pleasure.

It is causeless joy — joy that arises simply from being.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

In dance, this can feel like:

· The dancer disappears.

· Movement flows effortlessly.

· Rhythm and breath become one.

· There is oneness with space, music, and self.

Relationship Between Shanta and Ānanda

You can think of it this way:

· Shanta is the still lake.

· Ānanda is the reflection of the sky in that stillness.

First comes peace (Shanta).

From peace arises bliss (Ānanda).

1. In the Context of Classical Indian Dance

Since you are deeply exploring emotion, rasa, and mindfulness in classical dance: · Shanta is the inner stillness.

· Ānanda is the spiritual joy experienced when bhava transforms into rasa. · It is the moment when the dancer and the divine audience become one. **2. Ānanda and Positive Psychology is achieved through dance when** · Self-consciousness dissolves

· Action and awareness merge

· Time feels suspended

This parallels Ānanda experienced in meditative arts and dance.

3. Ānanda in Global Performing Arts

Indian artists carried the aesthetic of bliss into the world stage:

· Dance was not mere entertainment but much beyond...

· It's a vehicle of spiritual elevation.

· Ānanda became a shared experience between performer and audience with deep connection.

4. Ānanda in Contemporary Global Culture

Today, the idea of bliss manifests in:

· Ecstatic dance movements, emotions and powerful story telling

· Conscious movement therapy and facial expressions

The language may shift from Sanskrit to psychology, but the core remains: A unified state where body, mind, and consciousness operate in harmony and results into bliss. **Conceptual Understanding**

In the global arena, Ānanda has evolved from a strictly metaphysical concept to: · A serene psychological state

· An artistic goal

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

· A therapeutic multisensory experience

· A universal human aspiration

This experience bridges, the East and West, the science and the spirituality and merging the traditions with modern outlook.

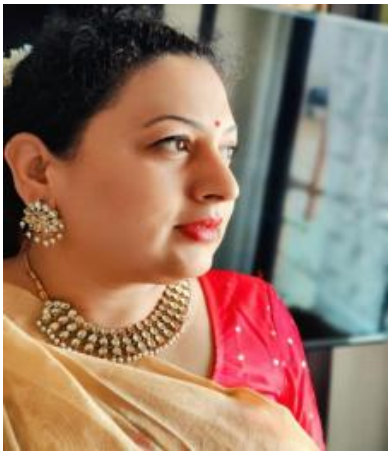

Something about the author

A passionate dancer (Diploma in Bharatnatyam and pursuing a diploma in Kathak), an avid writer and an ardent follower of Art.

This is a culmination of my life journey as an MBA (from Symbiosis Institute of Business Management) and having over 20 years of corporate experience (14 years with Hutch/Vodafone). One of the most loved roles in corporate life - to design policies.

A National Merit scholar and acknowledged as an upcoming artist by Government of India (for Bharatnatyam). Won various awards for Classical and folk dance.

Now, pursuing Master's in Communication and Experience Design through J.J. School of Art, Architecture and Design.

This paper is presented under the guidance of our Dean Dr. Jagdish Khaire.

Conclusion

Dance is probably the only activity where one's body, mind and soul all are involved at the same time and it's not just one part of the body (anga, upanga and pratyang -all the major body partsto the minutest part - like moving of the eyebrow) all the parts moving simultaneously in rhythm with expressions, taking 'Sthanakas'(standing poses) automatically leads to surrendering all other feeling, emotions, thoughts, sentiments and worries... Thus, at the particular time the person is only dancing and nothing else... leading to a state of moving meditation and dance, dancer, music, and, rhythm all

becoming one movement!!! Leading to bliss - when you are so absorbed that the mind disappears and becomes a meditation in movement, frees oneself from emotional repression leading to egoless, selflessness, spiritual dissolving the whole being and being one with the true freedom joy ecstasy – **The Ānanda**

Bibliography

1)'The Natya Shastra', attributed to Bharata Muni (circa 200 BCE–200 CE).

2) Kathak Shashtra Darshan - Part I. Akhil Bhartiya Gandharva Mahavidyalaya Mandal Prakashan - 2022.

3) Kathak Nritya Shiksha, by Bindu Prakashan Part I, by Dr. Puru Dadhich, 2019.

4) The Book of Secrets by Osho, published by St. Martin's Griffin, 1998.

5) Adiyogi – The Source of Yoga - by Sadhguru, published by HarperCollins India, 2017. **https://drive.google.com/drive/folders/1mnNC-xW9LE-VmnsKsIZFEJUHY67zOB5p**

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 163-174 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/SKAD1825

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

7. CONTRIBUTION OF WOODEN ART IN THE PROMOTION OF FOLK ART OF CHITRAKOOT (चित्रकूट की लोक कला संवर्धन में काष्ठ कला का योगदान)

Anuj Mishra[a]* Dr. Prasanna Patkar[b]

[a] *Research Scholar, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramodaya University, Chitrakoot, Satna, Madhya Pradesh*

[b] *Associate Professor, Mahatma Gandhi Chitrakoot Gramodaya University, Chitrakoot, Satna, Madhya Pradesh*

[a]*Email: artistajmishra98@gmail.com*

Abstract:

Among the religious and cultural sites of India, **Chitrakoot** is a renowned place known for its historical significance and religious importance. It is situated across the two states of **Uttar Pradesh and Madhya Pradesh**. The wooden folk art of Chitrakoot is a living expression of Indian cultural traditions. This folk art is particularly famous for its **wooden toys**. The woodcraft tradition of this region is well known for the use of a special type of wood called **"Doodhiya" wood**.

This art form is created especially for children's entertainment. Besides providing aesthetic pleasure, it also represents the cultural memories of rural life and society, religious beliefs, and serves as a source of livelihood for traditional artisans.

The tradition of wooden toys has been preserved through generations, maintaining ancient techniques and artistic styles passed down from one generation to another. This has helped in strengthening regional identity and ensuring the continuous development and preservation of folk art. In the present era, the display of this art at art fairs, festivals, markets, tourist destinations, and handicraft exhibitions, along with the increasing demand for these wooden products, has given Chitrakoot's folk art recognition at the national level.

This art form is also a significant means of livelihood for local artisans. Thus, the wooden craft of Chitrakoot is not only a carrier of cultural heritage but also plays a crucial role in the preservation, promotion, and economic empowerment of folk artists.

This research paper presents an in-depth and detailed study of the origin, development, characteristics, reasons for popularity, utility, and expansion areas of wooden craft in the folk art of Chitrakoot. The study clearly establishes that the wooden toys of Chitrakoot are not limited only to regional folk art; rather, efforts are being made to take this craft tradition and India's cultural diversity to a global platform.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

भारत के धार्मिक और सांस्कृतिक स्थलों में से अपनी ऐतिहासिकता और धार्मिकता के लिए एक सुप्रसिद्ध स्थल चित्रकूट है, जो उत्तर-प्रदेश व मध्य-प्रदेश दो राज्यों का सम्मिश्रण है। चित्रकूट की यह काष्ठ लोककला भारतीय सांस्कृतिक परंपरा का जीवंत अभिव्यक्ति है। यह लोक कला विशेषकर "लकड़ी के खिलौनों" के लिए जानी जाती है। यहाँ की काष्ठ कला परंपरा 'दूधिया' नामक लकड़ी के लिए प्रसिद्ध है।

यह कला विशेष रुप से बच्चों के मनोरंजन के लिए निर्मित की जाती है इसके अतिरिक्त यह कला सौंदर्यबोध की अभिव्यक्ति करती है बल्कि ग्रामीण जीवन व समाज की सांस्कृतिक स्मृति, धार्मिक आस्थाओं और पारंपरिक कारीगरों की आजीविका का आधार भी हैं।

लकड़ी के खिलौनों की परंपरा प्राचीन काल से पीढ़ी दर पीढ़ी परंपरागत रुप से चली आ रही तकनीकों और रुपात्मक शैलियों को संरक्षित रखा गया है, इससे क्षेत्रीय पहचान और शसक्त व लोककला का सतत संवर्धन संभव होता है। वर्तमान में इस कला का प्रदर्शन कला मेला, त्यौहारों, बाजारो और पर्यटन स्थलों और हस्तशिल्प बाजारों में इन काष्ठ उत्पादों की मांग बढ़ने से चित्रकूट की लोककला को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली है ।

यही माध्यम स्थानीय कारीगरों की जीविका का माध्यम है। इस प्रकार, चित्रकूट की काष्ठ कला न केवल सांस्कृतिक विरासत की वाहक है, बल्कि लोककला के संरक्षण, प्रचार और आर्थिक सशक्तिकरण में निर्णायक भूमिका निभाती है।

यह शोध पत्र चित्रकूट की लोककला में काष्ठ कला का उद्भव, विकास, विशेषताएँ, प्रसिद्धि के कारण, उपयोगिता और विस्तार क्षेत्र का गहन व सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत करता है। और इस अध्ययन से यह पूर्ण रुप से स्पष्ट होता है, कि चित्रकूट के लकड़ी के खिलौने केवल क्षेत्रीय लोककला के लिए ही नहीं हैं, अपितु यह भारत की सांस्कृतिक विविधता और शिल्प परंपरा को वैश्विक स्तर तक पहुँचाने की चेष्टा की जा रही हैं।

Keywords: Chitrakoot, Folk Art, Wood Craft, Wooden Toys, Cultural Heritage, Traditional Artisans

चित्रकूट, लोककला, काष्ठ शिल्प, लकड़ी के खिलौने, सांस्कृतिक धरोहर, पारंपरिक कलाकार ।

---

* Corresponding author.

भूमिका

भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराएँ सदियों से विविधता और समृद्धि से परिपूर्ण रही हैं। यहाँ का हर क्षेत्र अपनी विशेषज्ञताओं के साथ-साथ शिल्प और लोककला परंपरा के लिए पहचाना जाता है। इन कलाओं से निर्मित कलाकृतियों ने समाज को केवल मनोरंजन के साधन के अतिरिक्त उनकी स्मृतियों, सांस्कृतिक और धार्मिक धारणाओं व आदर्शों को भी समेटा हुआ है।

चित्रकूट धार्मिक दृष्टिकोण से अति महत्वपूर्ण स्थल है, जहाँ भगवान राम ने अपने के 14 वर्ष वनवास में लगभग 12 वर्ष का समय चित्रकूट में व्यतीत किये। इसी कारण यहाँ श्रद्धालुओं और तीर्थ यात्रियों का निरंतर आगमन होता रहता है। यही कारण है, कि चित्रकूट की लोककलाओं और शिल्पकलाओं में विशेष रुप से विकास हुआ है। जिसमें से "लकड़ी के खिलौनों" की परंपरा सबसे अधिक जीवंत और आकर्षक है।

लकड़ी के खिलौने बच्चों के जीवन का मनोरंजन का साधन होते हुए भी समाज की सामूहिक स्मृति और लोक संस्कृति के दर्पण हैं। इनका महत्व केवल खेल तक सीमित नहीं अपितु शिक्षा, आस्था और आजीविका से भी जुड़ा है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य चित्रकूट की "लकड़ी के खिलौनों" की प्राचीन परंपरा का बहुआयामी अध्ययन करना है।

उद्भव एवं विकास

चित्रकूट जिला उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश की सीमा में बसा हुआ है और इसी चित्रकूट क्षेत्र के अन्दर ही सीतापुर (उत्तर प्रदेश) व नया गांव (मध्य प्रदेश) नामक स्थान में इन लकड़ी के खिलौने बनाने वाले कलाकारों के घर है। ये सभी कलाकार अपने तन मन और पूरे कर्तव्य निष्ठा से इस कार्य में लीन रहते है। इस कला का उद्भव राजस्थानी राजपूत कलाकारों द्वारा मानी जाती है। आज से कई वर्षों पूर्व राजस्थानी कलाकार अपनी जीविका चलने हेतु राजस्थान से निकलकर चित्रकूट में आकर निवास करने लगे।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

मनुष्य अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को चलाने हेतु प्रयत्नशील रहता है। चित्रकूट में आने जाने वाले श्रद्धालुओं और यात्रियों को ध्यान में रखते हुए इस कलाकृति का सृजन किया गया क्योंकि चित्रकूट में लकड़ी के खिलौनों का उद्भव एक धार्मिक और सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किया गया। तीर्थयात्री जब यहाँ आते है तो वे स्मृति-चिह्न स्वरुप हस्तनिर्मित वस्तुएँ साथ ले जाते। धीरे-धीरे यह परंपरा लोककला के रुप में स्थिर हो गई।

इन कलाकारों ने अपने पालन-पोषण के लिए इस कार्य का आरंभ किया जो चित्रकूट के लिए एक अद्भुत, आकर्षक और अनोखी कला थी। चित्रकूट में लगभग 30 घरानों की संख्या के आसपास परिवारों में लकड़ी के खिलौनों का काम चलता था, वर्तमान में लगभग 8 से 9 घरानों में ही इस कार्य को परंपरागत तरीके से चलाया जा रहा है।

आरम्भ में मशीन ना होने के कारण कलाकार स्वयं से निर्मित पत्थर के दो बड़े-बड़े चक्र के आकार के सपाट गोलाकार पहियों में बेल्ट लगाकर हाथों द्वारा घुमाया जाता था। जिसकी सहायता से कलाकृति को मनचाहा आकार दिया जा सके। आगे चलकर जैसे-जैसे विकास होता गया कार्य पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ता गया मशीनों का आविष्कार हुआ जिससे कलाकृतियों को आकार देना और सरल सिद्ध हुआ। वर्तमान में यह कलाकृति चित्रकूट क्षेत्र के अलावा राष्ट्रीय व अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर अपना परचम लहरा रही है।

काष्ठ कला का परिचय

भारत में मूर्तिकला का इतिहास अति प्राचीन और बहुआयामी रहा है। भारतीय सांस्कृति में सदियों से विभिन्न प्रकार की धार्मिक, सामाजिक, जनकल्याणकारी प्रतिमाओं का सृजन होता रहा है। जिसमें काष्ठशिल्प का एक अलग ही महत्तवपूर्ण स्थान रहा है प्राचीन काल से लकड़ी का उपयोग बैलगाड़ी, दरवाजा, मेज कुर्सी, घर की अन्य उपयोगी वस्तुओं के निर्माण में, औज़ार बनाना, रथ बनाना, मूर्तियाँ बनना आदि।

भारतीय इतिहास में सदियों से अपनी ऐतिहासिकता और संस्कृति के लिए प्रसिद्ध उत्तर- प्रदेश राज्य के चित्रकूट जिले के सीतापुर कस्बे में 'दूधिया' नामक हल्की, मुलायम और सफेद रंग की लकड़ी पाई जाती है इसी कारण इसे 'दूधिया' नाम से जानी जाती है यह लकड़ियों की नवीन खोज स्थानीय लोककला जगत में बच्चों के मनोरंजन के लिए लाकड़ियों के खिलौने व कुछ आकर्षक व उपयोगी वस्तुओं का निर्माण करने लगे धीरे-धीरे यह कला चित्रकूट की लोककला के रुप में प्रसिद्ध हो गई।

इस लकड़ी को बहुत ही आसानी से तारसकर मनचाहा आकार दिया जा सकता है जिसमें स्थानीय शिल्पकार विभिन्न प्रकार के खिलौने, पशु- पक्षीयों व जानवरों की आकृतियाँ, मानव की प्रतीकात्मक खिलौने नुमा आकृतियाँ व विभिन्न प्रकार की सजावटी वस्तुओं का निर्माण करते है। इस प्रकार से दूधिया लकड़ी ने स्थानीय कारीगरों पर अपनी गहरी छाप छोड़ी जो चित्रकूट वासियों के लिए एक रोजगार के रुप में सिद्ध हुई।

"Due to being a forest area, there is abundance of wood (raw material) in Chitrakoot. A large number of craftsmen in this district are engaged in making wooden toys. The toys produced here are sent to different districts of the state for sale as well as for fairs and exhibitions."

चित्र:1 लाकड़ियों का भंडार

चित्र:2 रगींन लाख से रंगी हुई लकड़ियाँ

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

चित्रकूट क्षेत्र में लकड़ी के खिलौने निर्माण की कला वर्षों पूर्व से विकसित होता चली आ रही है। यह कला ग्रामीण जन जीवन की सहज अभिव्यक्ति है। कलाकारों ने चित्रकूट के घने जंगलों में जाकर लकड़ियों की खोज की जिसमें "दूधिया" नामक लकड़ी का परीक्षण किया गया जो कलाकृति के लिए सर्वोत्तम सिद्ध हुई, क्योंकि यह लकड़ी बहुत ही हल्की, मुलायम और बिना रेशे की लकड़ी है, जो खिलौनों के लिए अतिउत्तम सिद्ध हुई। इस लकड़ी का जातीय नाम "कोरैया" है, जिसको अंग्रेजी में (milkwood) के नाम से जाना जाता है।

इस लकड़ी से छोटे-छोटे बच्चों के खेलने के खिलौनों के अतिरिक्त लकड़ी के खिलौनों में धार्मिक पात्र जैसे- गणेश जी व पशु-पक्षीयां, बैल, घोड़ा, हाथी, मोर, गौरैया और ग्रामीण जीवन की झलकियाँ जैसे- चरखा, बैलगाड़ी, हल चलाते किसान व अन्य प्रकार के अलंकरण युक्त वस्तुएँ सृजित की जाती है, जो बहुत ही आकर्षक होती है।

विशेष रूप से दिखाई देते हैं। और यही कला चित्रकूट की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान के दर्शन करवाती हैं।

चित्रकूट के खिलौनों की विशेषता

वर्तमान में यह लोककला-स्थानीय पहचान के साथ-साथ हस्तशिल्प की विरासत के रूप में उभर रही है और नए सांस्कृतिक मंच तक कलाकारों की विरासत को भी बढ़ावा दे रही है

- यहाँ की वनीय क्षेत्र में यह दूधिया लकड़ी आसानी से उपलब्ध हो जाती है।
- चित्रकूट के अधिकांश स्थानीय प्रारंपरिक कारीगर 'लकड़ी के खिलौने निर्माण' में रुचिवान है।
- इस क्षेत्र के में निर्मित खिलौनों को चित्रकूट राज्य में पर्यटन स्थल, लोकल मेलों व तीर्थ यात्रियों के लिए बाजार में उपलब्ध करवाना इसके अतिरिक्त राज्यों के बाहर भी प्रदर्शनियों व विक्रय करने हेतु भेजा जाता है।
- चित्रकूट की यह लोककला (लकड़ी के खिलौने) की विरासत लगभग 400 साल से भी पुरानी है।

औजारों के नाम

इस कलाकृति के सृजन के लिए कलाकार विशेष प्रकार के औजारों का प्रयोग करते है, प्रयोग में आने वाले सभी औजारों का निर्माण स्वयं कारीगर अपने हाथों से करता है। जिससे कलाकृति को तराशते समय मनचाहा आकार दिया जा सके। इन सभी भिन्न-भिन्न प्रकार के औजारों का प्रयोग करके कारीगर लकड़ी को तराश कर कलाकृति को नवीन आकार में परिवर्तित करता है। इन औजारों के नाम मुख्यतः इस प्रकार से है जैसे- आरी, छेनी, रंदा, मुगदा, मियाना, रुखान, खुरचुन्ना, बखिया, बर्मा, बर्मी, कंपास, आरी, नहनिया, हथौड़ी आदि।

इन औजारों के अतिरिक्त मशीन का भी प्रयोग किया जाता है अधिकतर जब लकड़ी को गोल आकार देना हो या फिर उसे खोखला करना हो तो इस कार्य को मशीन कम समय में अधिक सुंदर स्वरूप प्रदान कर देती है ।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

खिलौनों में उपयोगी रंग

बलराम सिंह राजपूत ने बताया कि इन कलाकृतियों में प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया जाता है। इन प्राकृतिक रंगों का प्रयोग "लाख" के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है, (लाख लैसिफर लैक्का नामक कीटों द्वरा निकली हुई प्राकृतिक राल होती है जिसे इककठठा करके आग में गर्म किया जाता है और उसी समय उस गर्म पिघले हुए द्रव्य में रंगों को मिलय जाता है और इस प्रकार रंगहीन लाख रंगयुक्त हो आता है) जो खिलौनों को चमकदार और आकर्षक बनाता है।

इन खिलौनों में अधिकतर प्राथमिक रंगों का प्रयोग किया जाता है, जैसे- लाल, पिला, हरा, नीला आदि। और इस कलाकृति में सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है, कि इस कलाकृति को आकार देने के तत्पश्चात मशीन के सहायता से खिलौनों को रंगा जाता है। इसके बाद खिलौनों को अधिक आकर्षक व चमकदार बनाने के लिए "केवड़ा" नामक वृक्ष के पतों से घिसाई की जाती है। ये प्रक्रिया कलाकृति सृजन का अंतिम चरण होता है। जिससे पूर्णतः खिलौना बनकर तैयार हो जाता है ।

मध्यकालीन विकास

मध्यकाल में जब चित्रकूट धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रमुख केंद्र बना, तो लकड़ी के खिलौनों की माँग और भी अधिक बढ़ गई। इस काल में खिलौनों में धार्मिकता का भी समावेश हुआ है। इन कलाकृतियों में लट्टू, पीपीहीरी, सिंदूरदानी, फूलदान, डंबल, चिड़िया आदि प्रकार के खिलौनों का निर्माण हुआ। ये खिलौने बच्चों और घरेलू परिवारों को अपनी ओर आकर्षित कर रहे है। इसी परिणाम को देखते हुए कलाकारों ने नवीन विचारधारा के साथ नवीन प्रकार के खिलौने का निर्माण करना आरंभ कर दिया जो समाज के दृष्टिकोण से अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

वर्तमान में विस्तार

वर्तमान में चित्रकूट राज्य के पर्यटन मेलों, बाजारों और प्रदर्शनियों के कारण इन खिलौनों का विस्तार राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर तक हो चुका है। कारीगर अब आधुनिक औजारों और कृत्रिम रंगों का प्रयोग करने लगे हैं, जिससे खिलौनों का आकर्षण और अधिक बढ़ गया है। अब तो इन खिलौनों में तरह-तरह की सुंदर आकृतियों को रूप दिया जा रहा है, जो मनमोहक है। वर्तमान में तो इस लकड़ी के खिलौनों की लोककला को सँजोकर रखने के लिए के व कार्य को निरंतर जारी रखने के लिये नई पीढ़ी भरसक प्रयास कर रही है। क्योंकि वर्तमान में इस कलाकृति की मांग बहुत तेजी से बढ़ती जा रही है।

प्रसिद्धि का कारण

चित्रकूट के लकड़ी के खिलौनों की प्रसिद्धि के कई कारण हैं जो इस प्रकार से है -

- धार्मिक पर्यटन – रामघाट, कामदगिरि, सतीअनुसया आश्रम, हनुमान धारा व गुप्त गोदवारी जैसे तीर्थ स्थलों में प्रचुर मात्रा में आने वाले यात्री इन कलाकृतियों को बच्चों के लिए, यादगार व सजावट के लिए खरीदते हैं।
- स्थानीय मेले व बाजार– राम नवमी, दीपावली, अमावस्या और मकर संक्रांति जैसे अन्य त्योहारों व शुभ अवसरों पर अधिक मात्रा इन खिलौनों का व्यापार प्रचुर मात्रा में होता है।
- कलाकारों की परमपराएं – चित्रकूट की ये कला कई वर्षों पूर्व से पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है, जिसक वर्तमान में भी साजोंकर रखा गया है, जिसमें नई पीढ़ियां संलग्न है जो इस लोककला को सामज के समक्ष एक नवीन आयाम के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा करते जा रहे है।
- सरल व आकर्षक रूप – इन खिलौनों की मौलिकता और धार्मिक व सामाजिक महत्त्व इन्हें एक विशेष पहचान दिलाते हैं।
- पर्यटन और बाजार – पर्यटन मंत्रालय और हस्तशिल्प मेलों ने इस कला की पहचान बहुमुखी रूप से व्यापक की।

उपयोगिता और उसका विस्तार क्षेत्र

सांस्कृतिक उपयोगिता

चित्रकूट की इस लोककला से निर्मित खिलौने केवल बच्चों के मनोरंजन का साधन नहीं अपितु चित्रकूट वासियों की अभिव्यक्ति, भावनाएं, धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक धरोहर के रूप को संरक्षण प्रदान किया जा रहा हैं।

शैक्षिक उपयोगिता

इन खिलौने से बच्चों में रचनात्मकता, कल्पनाशक्ति और सामाजिक शिक्षा का विकास जन्म लेता हैं। क्योंकि ये सभी कलाकृतियां लोककला से सम्बन्धित विषयों में परिपूर्ण होती है, जिसमें पहिए वाली विभिन्न प्रकार की गाड़ियां, कठपुतली, सीटी, फिरंगी, फूलदान, लट्टू, डिबिया, मयूर, डम्बल, स्किपिंग रोप, किचन सेट, बाल कैच गेम, थ्रेड टॉप्स, किसान की बैलगाड़ी आदि तरह की घरेलू व जीवनोपयोगी वस्तुएं तैयार की जाती है। इन सभी खिलौने से बच्चा देखकर-देखकर सीखता और खेलता है और उस खिलौने को देखकर उस बच्चे के मन में बहुत अदभुत विचार उत्पन्न होते होंगे जिनको बच्चा बड़ा होने के बाद उसे कलाकृति में परिवर्तित करने की चेष्टा करता है।

“हमें लगा हमारी पीढ़ी के जाने के बाद कोई जानेगा नहीं इन खिलौनों के बारे में। जितना भी कम कमा रहे हों हम, यह कला है हमारी, ऐसे कैसे ख़त्म होने दें! यही सब सोचकर मैंने अपने परिवार वालों की मदद से आसपास के कुछ लड़कों को अपने घर पर ही बुलाकर प्रशिक्षण देने की कोशिश शुरू की है। हालांकि अभी तीन ही लोग हैं जो काम सीखने आते हैं, वो भी अपने स्कूल, कॉलेज के बाद। लेकिन हम खुश हैं कि कोई तो है।” – भगवती

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

आर्थिक उपयोगिता

लकड़ी के खिलौनों से ही उन काष्ठ कारीगरों का जीवन यापन होता है। क्योंकि यही लकड़ी की कला ही उनका व्यापार है और उस व्यापार के साधन कुछ इस प्रकार से है, जैसे–पर्यटन मेले, प्रतियोगिताएं और बाजार आदि इनके रोजगार के मुख्य स्रोत हैं। इसके अतिरिक्त समय-समय पर प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाता है। वर्तमान में तत्कालीन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने इस कला को प्रोत्साहन प्रदान किया है, जो कलाकारों के लिए अत्यंत सुखमय और लाभकारी सिद्ध होगा ।

विस्तार क्षेत्र

सर्वप्रथम इस लकड़ी के खिलौनों की सीमा केवल चित्रकूट और उनके आसपास के क्षेत्र तक सीमित थी अपितु MSME (Micro, Small and Medium Enterprises) और ODOP (One District One Product) में आयोजित कार्यक्रमों में प्रदर्शित किए गए खिलौनों को देखकर तत्कालीन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने इस कलाकारी को राज्य स्तरीय से अंतरराष्ट्रीय स्तर तक पहुंचने की चेष्टा की है। जो वर्तमान में कलाकारों के लिए रोजगार का साधन बन चुका है। पश्चिमी पर्यटक इन कलाकृतियों को भारत की सांस्कृतिक धरोहर के रूप में अपनाते हैं।

कार्यरत कलाकार

इस कार्य क्षेत्र में सलंग्न कारीगरों के नाम उल्लेखनीय है, जो इस परंपरागत कला को संजोए हुए है। बलराम सिंह राजपूत (राज्य पुरस्कार से अलंकृत), अश्विनी कुमार राजपूत, महेंद्र तोमर, राजन जोशी, धीरज दुबे, जनार्दन रैदास, सत्यनारायण, हरि सोनकर, गोरेलाल प्रजापति व सुखेन्द्र कुमार आदि कलाकार इस कला को आज भी जीवित रखे हुए है।

विशेषता

चित्रकूट के इस "दूधिया" लकड़ी के खिलौनों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं, जो इस प्रकार से है

- हस्तनिर्मित कला – प्रत्येक खिलौना को हाथों द्वारा तराशा जाता है, जो इसे आकर्षक, अदभुत और विशिष्ट बनाता है।

- सादगी में सौंदर्य – इन खिलौनों में साधारण प्राथमिक रंगों को इतने स्वच्छ और सुंदर तरीके से लगाया जाता है, जिससे डिज़ाइन सरल होते हुए भी प्रभावशाली, मनमोहक प्रतीत होने लगती हैं।

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 175-182 (Total PP 08)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/QMZK4226

- धार्मिक झलक – चित्रकूट की इन कलाकृतियों में बिशेष रुप से बच्चों के खिलौने का सृजन किया जाता है व साथ ही साथ लोक कथाओं से जुड़े पात्र प्रमुख रुप से गणेश जी व रामायण से संबंधित आकृतियाँ देखने को मिलती हैं।
- स्थानीय संसाधनों का उपयोग – इन खिलौनों में प्रायः दूधिया ("कोरैया") लकड़ी का प्रयोग किया जाता है।
- पर्यावरण मित्रता – ये खिलौने प्राकृतिक, हल्के और अधिक टिकाऊ होते हैं
-
- लाभकारी – ये लकड़ी प्रायः मीठी होती है, जो बच्चों के ले लाभकारी सिद्ध हो रहा है
- क्योंकि बाजार में उपलब्ध किसी भी माध्यम में निर्मित खिलौनों को बच्चे खेलते समय मुंह में लगाकर चूसने लगते है, जो कहीं न कहीं बच्चों के स्वस्थ के लिए हानिकारक सिद्ध होता है। लेकिन चित्रकूट के दूधिया लकड़ी से निर्मित खिलौने प्राकृतिक मीठी, स्वाद युक्त लकड़ी है जो स्वस्थ के लिए हानिकारिक नहीं है।

उपसंहार

चित्रकूट अपने ऐतिहासिक प्रष्ठभूमि व धार्मिक स्थल होने के साथ-साथ एक विशेष प्रकार की लकड़ी के खिलौने जीवंत परंपरा का रुप हैं। ये खिलौने केवल बच्चों के खेल की वस्तु नहीं बल्कि धार्मिक विश्वास, सांस्कृतिक पहचान और कलाकारों को लिए आजीविका का स्रोत हैं। इनकी सरलता और मौलिकता ने इन्हें विशिष्ट पहचान दिलाती है।

वर्तमान समय में जब प्लास्टिक और कृत्रिम खिलौनों का प्रभुत्व है, तब चित्रकूट के लकड़ी के खिलौने पर्यावरण संरक्षण और सांस्कृतिक धरोहर दोनों के संवाहक के रुप में और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं। यह आवश्यक है, कि सरकार और समाज इस कला को संरक्षण और प्रोत्साहन दें ताकि यह धरोहर आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित पहुँच सके।

संदर्भ सूची

- अर्ध-संचारित साक्षात्कार
- संचारित साक्षात्कार
- यूपी इंटरनेशनल ट्रेड शो में चमके चित्रकूट के लकड़ी के खिलौने, कारीगरों की शिल्पकला का ...
- https://hindi.thebetterindia.com/art/chitrakoot-madhya-pradesh-craftsman-traditional-toymakers-wooden-handicrafts/
- https://odopup.in/en/article/chitrakoot

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

8. INTERCULTURAL AESTHETICS: INDIAN DANCE IN CONVERSATION WITH WORLD ART TRADITIONS

Dr. Tripti Gupta[a]*

[a] *Assistant Professor (Kathak), Department of Dance , Faculty of Performing Arts, The Maharaja Sayajirao University of Baroda*

[a] *Email: triptigupta25293@gmail.com*

Abstract:

Intercultural aesthetics has become a central framework in contemporary performance studies, particularly in understanding how classical traditions negotiate global modernity. This paper examines Indian classical dance as a dynamic and dialogic site of intercultural exchange, focusing on its philosophical foundations, historical transformations, and contemporary global engagements. Rooted in *rasa* theory as articulated in the Natya Shastra, Indian dance conceptualizes aesthetics as an embodied, spiritual, and affective experience rather than mere visual representation. Through encounters with Persian court culture, colonial modernity, Western ballet, modern dance, and contemporary global choreography, Indian dance has continuously evolved while maintaining epistemological continuity. The study argues that intercultural engagement in Indian dance is neither imitation nor passive assimilation, but a process of aesthetic negotiation, selective adaptation, and cultural assertion. By situating Indian dance within global performance discourse, this paper highlights its contribution to pluralistic artistic modernities and intercultural creativity

Keywords: Intercultural aesthetics, Indian classical dance, rasa theory, globalization, hybridity, performance dialogue

---

* Corresponding author.

1. Introduction

In the era of globalization, artistic traditions increasingly exist within networks of transnational exchange. Dance, as a kinetic and embodied art form, becomes one of the most immediate mediums through which cultures encounter each other. Indian classical dance traditions—such as Kathak, Bharatanatyam, Odissi, Kathakali, and Manipuri—have long functioned as repositories of aesthetic philosophy, religious symbolism, and cultural memory. Their engagement with global dance traditions is therefore not simply stylistic but epistemological.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Unlike Western traditions that historically emphasized anatomical precision, perspective, and illusionistic space, Indian dance foregrounds metaphysical embodiment. The performer is not merely representing a character but becomes a vessel of aesthetic emotion. The foundational theory behind this experience lies in the *rasa* doctrine articulated in the Natya Shastra. Here, performance is conceived as a transformative process in which the spectator experiences aesthetic transcendence.

Thus, when Indian dance enters into dialogue with world traditions—whether Western ballet, contemporary dance, or East Asian theatre—the exchange involves not just technique but differing conceptions of body, emotion, time, and spirituality.

2. Theoretical Framework: Intercultural Aesthetics and Performance

Intercultural aesthetics, within performance studies, refers to the processes through which artistic traditions interact across cultural, geographical, and philosophical boundaries, producing new aesthetic meanings while negotiating identity and continuity. In the field of dance, interculturalism is not limited to visible stylistic fusion; it involves a deeper encounter between epistemologies—between different understandings of body, emotion, representation, spirituality, and spectatorship. Indian classical dance offers a distinctive theoretical lens through which intercultural performance can be examined because its aesthetic system is philosophically codified and metaphysically grounded.

The foundational framework of Indian performance theory is articulated in the Natya Shastra, traditionally attributed to Bharata Muni. Unlike Western aesthetic traditions that evolved through philosophical treatises on mimesis and realism, the *Natya Shastra* conceptualizes performance as a sacred act that mirrors cosmic processes. Dance (*nritta*), expressive storytelling (*nritya*), and dramatic enactment (*natya*) together constitute a holistic aesthetic system. This text positions performance not merely as entertainment but as a means of spiritual refinement and ethical instruction. Central to this framework is the theory of *rasa*, the aesthetic essence relished by the spectator. *Rasa* emerges from the transformation of emotional states (*bhavas*) through codified gesture, rhythm, and expression. The performer does not present personal emotion; rather, emotion is stylized and universalized so that the audience experiences contemplative immersion. This theory differs significantly from Aristotelian catharsis, which emphasizes emotional purgation through narrative conflict. In contrast, Indian aesthetics aims at aesthetic savoring—an elevated, reflective experience that transcends personal psychology.

When situated within intercultural discourse, *rasa* theory offers an alternative to Western modernist emphasis on individual expression and abstraction. Many Western dance traditions—such as ballet and postmodern dance—prioritize bodily virtuosity, spatial design, or conceptual experimentation. Indian dance, however, integrates technique with symbolic meaning and spiritual intentionality. Thus, intercultural choreography involving Indian dance is not merely technical blending but philosophical negotiation.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Performance theorists such as Richard Schechner have described performance as "restored behavior," suggesting that all performance is constituted by repeated, culturally encoded actions. This concept aligns with Indian classical dance, where repertoire, gestures, and narrative structures are transmitted through lineage-based pedagogy. However, intercultural aesthetics complicates restored behavior by introducing unfamiliar movement vocabularies and dramaturgical structures. The performer must navigate between fidelity to tradition and openness to innovation.

Another crucial dimension of intercultural aesthetics is embodiment. In Western phenomenological thought, the body is often examined as a site of perception and agency. In Indian aesthetics, however, the body is also metaphysical—conceived as a vehicle for divine manifestation. For example, Bharatanatyam's sculptural poses evoke temple iconography, and Kathak's rhythmic footwork reflects cosmological cycles. When these forms enter global stages, the metaphysical dimension may not always be readily legible to international audiences. Intercultural performance thus requires translation—not only linguistic but symbolic.

Time and space further distinguish aesthetic paradigms. Western theatrical traditions often follow linear narrative progression and perspective-based staging. Indian classical dance operates within cyclical temporality, particularly in rhythmic improvisation and thematic elaboration. The repetition of motifs, gradual intensification of tempo, and meditative pacing reflect philosophical notions of cyclical time. In intercultural collaborations, reconciling linear dramaturgy with cyclical elaboration becomes a choreographic challenge.

Moreover, intercultural aesthetics must be examined through postcolonial critique. Historically, Western artists appropriated Asian performance techniques to rejuvenate modernist theatre and dance. However, such exchanges often occurred within asymmetrical power relations. Indian dance, therefore, must assert agency within global collaborations, ensuring that its philosophical frameworks are not reduced to exotic spectacle or decorative gesture. True intercultural dialogue demands epistemic reciprocity, where aesthetic systems engage as equals rather than hierarchies.

Pedagogically, intercultural performance transforms training methodologies. The guru–shishya parampara emphasizes immersive transmission, moral discipline, and experiential learning. Western institutional models prioritize codified syllabus and academic evaluation. Contemporary dance institutions increasingly combine these approaches, reflecting intercultural pedagogy itself. The dancer trained in both systems embodies cultural translation, negotiating technical precision with philosophical depth.

In contemporary global choreography, intercultural aesthetics manifests through layered movement vocabularies, multilingual music compositions, and cross-cultural thematic exploration. Yet the success of such works depends on conceptual coherence. Superficial fusion risks aesthetic dilution, whereas deeply researched collaboration can generate new artistic languages that honor lineage while embracing innovation.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Therefore, the theoretical framework of intercultural aesthetics in Indian dance must be understood as a dialogic continuum. It involves:

- Philosophical negotiation between *rasa* and Western aesthetic theories
- Embodied translation across movement systems
- Reconciliation of cyclical and linear temporalities
- Ethical engagement within postcolonial power structures
- Pedagogical hybridity in transmission practices

Indian dance contributes significantly to global performance theory by offering an integrated model where aesthetics, spirituality, ethics, and embodiment coexist. Intercultural aesthetics, viewed through this lens, is not merely cultural blending but a transformative process that reshapes both tradition and modernity.

3. Historical Intercultural Exchanges in Indian Dance

3.1 Indo-Persian Courtly Interactions

Kathak's evolution during Mughal rule exemplifies early intercultural synthesis. Under court patronage, temple storytelling traditions encountered Persian aesthetics of refinement, costume, and music. The incorporation of intricate footwork, spins, and delicate expressional nuances reflects this synthesis.

Rather than erasing devotional roots, the courtly transformation expanded Kathak's expressive vocabulary. Persian poetic sensibilities influenced thematic content, while rhythmic experimentation enriched its technical complexity. This historical phase demonstrates that intercultural aesthetics in Indian dance predates colonial modernity and functioned as organic adaptation rather than forced assimilation.

3.2 Colonial Encounter and Reconstruction

The colonial period marked a crisis in Indian dance traditions. Anti-nautch movements delegitimized temple-based practices, leading to social marginalization. However, the early twentieth century witnessed revivalist reform led by figures such as Rukmini Devi Arundale, who restructured Bharatanatyam for proscenium presentation.

This reconstruction involved selective borrowing from Western stagecraft—costume standardization, lighting design, and choreographic sequencing. Simultaneously, pioneers like Uday Shankar experimented with synthesizing Indian motifs and Western modern dance techniques. His productions toured Europe and engaged international audiences, marking one of the earliest global representations of Indian dance modernity.

The colonial encounter thus produced both crisis and creativity, catalyzing intercultural reinvention.

4. Indian Dance and Western Ballet: Aesthetic Dialogue

The aesthetic dialogue between Indian classical dance and Western ballet represents one of the most compelling encounters in global performance history. These two traditions evolved within distinct cultural, philosophical, and socio-political contexts, yet both developed highly codified technical vocabularies and rich narrative repertoires. Their

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

meeting in the twentieth and twenty-first centuries has generated complex conversations about embodiment, representation, discipline, and artistic modernity.

Western ballet emerged from the courts of Renaissance Italy and France, later formalized through institutions such as the Paris Opera Ballet. Its technique emphasizes verticality, extension, symmetry, and the illusion of weightlessness. The ballerina's upward thrust—achieved through pointe work and elongated lines—symbolizes transcendence, grace, and elevation beyond the earthly plane. Spatial design in ballet relies heavily on perspective, geometry, and ensemble symmetry, reflecting Renaissance visual principles.

In contrast, Indian classical dance forms such as Bharatanatyam and Kathak are grounded in sculptural stability and rhythmic intricacy. The dancer's body remains connected to the earth through bent knees and weighted footwork. Rather than striving for aerial illusion, Indian dance celebrates rhythmic stamping, percussive articulation, and controlled energy. The torso often remains steady while expressional intensity radiates through facial muscles, hand gestures (*mudras*), and subtle eye movements.

Philosophical Foundations

The divergence between ballet and Indian dance is rooted in distinct aesthetic philosophies. Indian dance derives its theoretical framework from the *rasa* doctrine articulated in the Natya Shastra. Here, the goal of performance is the evocation of aesthetic essence—an emotional experience that transcends the individual and enters universal contemplation. Expression (*abhinaya*) becomes central, and narrative episodes are vehicles for emotional realization.

Ballet, historically influenced by European humanism and Romanticism, prioritizes dramatic storytelling and physical virtuosity. Emotional expression is conveyed through movement quality, partnering, and mime sequences, but rarely through codified symbolic gestures comparable to *mudras*. While Romantic ballet sought spiritual elevation through ethereal heroines and supernatural themes, its aesthetic operates within a representational paradigm rather than a metaphysical one.

Thus, when Indian dance and ballet intersect, the dialogue unfolds at both technical and philosophical levels. The question arises: can *rasa*-based emotional stylization coexist with ballet's emphasis on linear dynamism and corporeal extension?

Technique and Kinetics: Groundedness vs. Elevation

Technically, ballet's vocabulary is built upon turnout, lifted posture, and expansive port de bras. The dancer strives for seamless continuity and smooth transitions. In Indian dance, geometry and rhythm dominate. Bharatanatyam's *aramandi* (half-sitting posture) creates triangular stability, while Kathak's fast spins (*chakkars*) are driven by rhythmic cycles (*tala*).

Interestingly, parallels can be observed. Kathak's spins resonate visually with ballet pirouettes, though executed with differing centers of gravity and aesthetic intention. Bharatanatyam's angular lines correspond with ballet's emphasis on

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

symmetry, yet their kinetic energy flows differently—Bharatanatyam movements often punctuated by rhythmic accents, ballet by sustained legato phrasing.

In intercultural choreographic experiments, artists sometimes juxtapose grounded footwork with airborne leaps, creating visual contrast between gravity-bound rhythm and ethereal ascent. Such contrasts become metaphorical—earth and sky, body and spirit, rhythm and melody—thereby enriching intercultural dialogue.

Narrative and Dramaturgy

Both traditions possess strong narrative foundations but structure storytelling differently. Classical ballets such as *Swan Lake* or *Giselle* unfold through linear plot progression, scenic transformation, and ensemble formations. Indian classical dance often presents episodic storytelling, where a single dancer portrays multiple characters through expressive transformation.

In Bharatanatyam or Kathak solo repertoire, the dancer shifts seamlessly between narrator, protagonist, and supporting figures, relying on codified gestures and facial nuance. Ballet, conversely, typically assigns roles to separate dancers, emphasizing group choreography and corps de ballet symmetry.

When choreographers merge these systems, dramaturgical innovation emerges. Solo abhinaya passages may be integrated into ensemble formations, or ballet corps patterns may frame Indian narrative sequences. This hybrid dramaturgy challenges conventional expectations of character embodiment and spatial design.

Music and Rhythm

Music further differentiates these traditions. Ballet choreography generally follows Western classical orchestration structured around harmonic progression. Indian dance is deeply intertwined with rhythmic cycles (*tala*) and melodic frameworks (*raga*). Percussive footwork interacts directly with live musicians, producing improvisatory dialogue.

Intercultural collaborations often experiment with blending orchestral strings and Indian percussion, creating layered sonic landscapes. However, aligning harmonic modulation with cyclical rhythmic elaboration requires sensitive compositional strategy. Successful synthesis depends on respecting structural integrity rather than forcing superficial synchronization.

Modernism and Twentieth-Century Encounters

The twentieth century marked intensified exchanges between Indian dance and Western theatrical modernism. Pioneering artists like Uday Shankar engaged European ballet dancers and designers, producing works that reimagined Indian themes through theatrical spectacle. His collaborations demonstrated that Indian movement vocabularies could dialogue with Western staging without losing cultural identity.

Later, global choreographers began incorporating yoga-inspired postures, hand gestures, and rhythmic patterns into contemporary ballet productions. While some exchanges reflected genuine curiosity and research, others faced critique for cultural appropriation. These tensions underscore the ethical dimensions of intercultural aesthetics.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Embodiment and Training

Training methodologies highlight deeper structural differences. Ballet pedagogy is institutionalized, emphasizing daily barre exercises, codified examinations, and hierarchical company structures. Indian dance training traditionally occurs within the guru–shishya lineage, prioritizing personalized mentorship, spiritual discipline, and repertoire transmission.

Intercultural dancers today often undergo dual training, embodying hybrid techniques. This corporeal negotiation produces dancers capable of navigating pointe work and *abhinaya*, leaps and mudras. Yet such hybridity demands rigorous grounding in both systems to avoid aesthetic superficiality.

Contemporary Intercultural Choreography

In contemporary global performance circuits, Indian and Western dancers collaborate in festivals and residencies, creating works addressing migration, identity, and cultural memory. These productions often juxtapose contrasting body languages to symbolize cross-cultural dialogue itself.

However, the most compelling intercultural works do not merely blend techniques but explore shared thematic concerns—longing, transformation, devotion, and transcendence. By identifying emotional universals while honoring stylistic specificity, such choreography embodies the true spirit of intercultural aesthetics.

Aesthetic Challenges and Possibilities

The aesthetic dialogue between Indian dance and ballet raises critical questions:

- Can metaphysical expressivity coexist with physical abstraction?
- How does one balance virtuosity with symbolic meaning?
- At what point does synthesis become dilution?

These questions do not signal conflict but creative tension. Intercultural aesthetics thrives in such tension, generating innovative vocabularies that expand rather than erase tradition.

Concluding Reflection on Dialogue

The encounter between Indian classical dance and Western ballet reveals not opposition but complementarity. Ballet's soaring elevation and Indian dance's grounded rhythm represent two philosophical orientations toward the body and transcendence. When engaged thoughtfully, their dialogue enriches global performance discourse.

Indian dance contributes to this exchange a theory of emotional universality rooted in *rasa*, while ballet offers spatial expansiveness and ensemble dynamism. Together, they demonstrate that intercultural aesthetics is not about homogenization but about coexisting artistic cosmologies.

5. Globalization, Diaspora, and Contemporary Choreography

The late twentieth and early twenty-first centuries have fundamentally transformed the ecology of Indian classical dance. Globalization—understood not merely as economic integration but as intensified cultural circulation—has repositioned Indian dance from a geographically rooted practice to a transnational artistic phenomenon.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Simultaneously, diasporic communities have emerged as powerful custodians and innovators of classical traditions, reshaping choreography, pedagogy, and performance contexts. Within this shifting landscape, intercultural aesthetics operates not as occasional collaboration but as a continuous condition of artistic production.

Global Circulation and the Recontextualization of Tradition

Historically, Indian classical dance was embedded within temple rituals, courtly patronage, and regional cultural ecosystems. In the global era, however, these forms circulate through international festivals, digital platforms, academic institutions, and multicultural arts markets. This relocation from sacred or courtly spaces to proscenium theatres and global stages alters not only audience demographics but also aesthetic expectations.

Choreographers today often adapt repertoire for diverse audiences unfamiliar with Sanskrit texts or mythological narratives. The challenge lies in preserving aesthetic integrity—particularly the experiential depth of *rasa*—while ensuring accessibility. In this sense, globalization necessitates translation without simplification. Narrative themes may be contextualized, surtitles employed, or thematic frameworks reframed to resonate with universal concerns such as migration, gender, ecology, and identity.

At the same time, globalization encourages cross-border artistic residencies, funding collaborations, and interdisciplinary experimentation. Indian dancers collaborate with contemporary musicians, digital designers, and international choreographers, generating new movement vocabularies. Such exchanges expand the expressive capacity of classical technique while situating it within global artistic conversations.

Diaspora as Cultural Mediator

The Indian diaspora plays a crucial role in shaping contemporary choreography. Communities in North America, Europe, Southeast Asia, and Australia have established institutions dedicated to training in Bharatanatyam, Kathak, Odissi, and other forms. These spaces function not merely as cultural preservation centers but as laboratories of reinterpretation.

Diasporic dancers often inhabit multiple identities—simultaneously rooted in ancestral heritage and shaped by global modernity. This dual belonging informs choreographic themes. Works may explore displacement, hybridity, memory, or intergenerational transmission. Mythological narratives are sometimes reimagined through contemporary lenses, linking ancient archetypes with modern diasporic experiences.

Moreover, diaspora audiences differ from traditional Indian spectators. Performances frequently occur within multicultural festivals where Indian dance is presented alongside African, East Asian, or Western forms. This proximity fosters comparative viewing and intercultural awareness, encouraging choreographers to articulate their aesthetic frameworks more explicitly.

Diaspora thus becomes an active mediator between tradition and global modernity, ensuring continuity while fostering innovation.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Contemporary Choreography and Thematic Expansion

Contemporary Indian choreographers increasingly move beyond purely mythological repertoire, engaging social, political, and environmental themes. While retaining classical technique, they explore narratives of gender justice, migration crises, ecological imbalance, and spiritual alienation in urban life. Such thematic expansion reflects the global consciousness of twenty-first-century artists.

For example, choreographic works may juxtapose traditional *abhinaya* passages with abstract movement sequences, symbolizing tension between heritage and modernity. Multimedia projections, spoken text, and experimental lighting design are incorporated without abandoning rhythmic structures or gestural codes. This layered aesthetic reflects globalization itself—complex, hybrid, and dialogic.

Importantly, these innovations do not signal rupture from tradition but reinterpretation. The *Natya Shastra* framework remains relevant because it accommodates emotional universality. Even contemporary themes can be expressed through classical *rasas*, demonstrating the adaptability of the aesthetic system.

Technology and Digital Mediation

Digital technology has dramatically accelerated intercultural exchange. Online workshops, virtual performances, and social media platforms allow dancers across continents to share repertoire and collaborate in real time. During global disruptions such as the COVID-19 pandemic, digital performance became not merely supplementary but essential.

This virtual turn transforms spectatorship. The camera reframes movement, highlighting facial expression and hand gestures in ways distinct from live theatre. Choreographers must consider framing, editing, and cinematic rhythm. Digital mediation therefore becomes an additional layer of intercultural aesthetics, blending performance with visual media traditions.

However, digital circulation also raises concerns of commodification and aesthetic dilution. Short-form social media clips may prioritize visual spectacle over philosophical depth. Maintaining artistic rigor within digital environments remains an ongoing challenge.

Hybridity and the Ethics of Fusion

Globalization often produces hybrid forms that blend classical technique with contemporary dance, hip-hop, or ballet influences. While hybridity can be creatively fertile, it also demands ethical reflection. Superficial fusion risks eroding the codified grammar of classical forms. Authentic intercultural choreography requires rigorous training and conceptual clarity.

The dancer's body becomes the site of negotiation. A performer trained in both Bharatanatyam and contemporary dance, for instance, must reconcile grounded geometry with fluid release technique. This embodied hybridity can produce powerful expressive possibilities, but only when grounded in disciplined understanding of each system's philosophy.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

Thus, globalization challenges artists to balance openness with rootedness. Intercultural aesthetics flourishes when hybridity emerges from dialogue rather than market trends.

Institutional and Academic Contexts

Globalization has also institutionalized Indian dance within universities and conservatories worldwide. Academic discourse situates these forms within performance studies, anthropology, gender studies, and postcolonial theory. Such scholarly engagement expands critical understanding while legitimizing Indian dance within global intellectual frameworks.Residencies and collaborative projects between Indian and international institutions foster research-based choreography. These initiatives encourage reflective practice, where artists articulate theoretical foundations alongside performance. The dialogue between practice and theory becomes central to contemporary intercultural aesthetics.

Cultural Politics and Representation

While globalization enables visibility, it also operates within global power hierarchies. Non-Western forms are sometimes framed as "traditional" in contrast to Western "contemporary" art. Such categorization risks marginalization. Contemporary Indian choreographers actively challenge this binary by asserting that classical vocabulary itself can be modern and politically engaged.

Diasporic artists particularly navigate representational politics. They must negotiate expectations of authenticity from heritage communities and innovation from global audiences. This dual pressure shapes choreographic choices and aesthetic strategies.

Intercultural aesthetics in the global era therefore involves negotiation of representation, agency, and voice. Indian dance is not merely displayed internationally; it actively participates in shaping global artistic discourse.

Conclusion: Continuity Within Transformation

Globalization and diaspora have transformed Indian classical dance into a transnational art form, expanding its thematic range and choreographic vocabulary. Yet, the foundational principles of *rasa*, rhythm, and embodied storytelling continue to anchor innovation. Contemporary choreography demonstrates that tradition is not static but dynamically responsive to historical change.

Intercultural aesthetics in this context becomes an ongoing process of translation, adaptation, and creative rearticulation. Rather than dissolving into homogenized global culture, Indian dance asserts pluralistic modernity—rooted in heritage yet open to dialogue. Through diaspora networks, digital platforms, and collaborative experimentation, it contributes to a shared global performance landscape while preserving its philosophical depth.

6. Interculturalism and Cultural Politics

Intercultural performance operates within global power structures. Historically, Western institutions have framed non-Western arts as "ethnic" or "traditional," positioning Western modernism as universal. Indian dance's participation in international festivals sometimes encounters such categorization.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

However, Indian aesthetics offers alternative paradigms of modernity. Its cyclical conception of time, spiritual embodiment, and emphasis on emotional universality challenge Eurocentric narratives of progress and abstraction.

Thus, intercultural dialogue must move toward epistemic equality. Indian dance should not be reduced to exotic ornamentation within global productions but recognized as a theoretical and philosophical contributor to world aesthetics.

7. Pedagogy and Intercultural Transmission

The guru–shishya parampara represents a lineage-based pedagogy emphasizing immersion, discipline, and ethical training. In contrast, Western conservatory models prioritize institutional curriculum and codified assessment.

Today, many institutions integrate both systems. Students learn traditional repertoire alongside contemporary improvisation and intercultural collaboration. This pedagogic hybridity shapes future choreographers capable of navigating global artistic landscapes.

Intercultural aesthetics in dance is thus transmitted not only through performance but through evolving pedagogical frameworks.

8. Conclusion

Indian dance traditions exemplify how intercultural aesthetics operates as a dynamic continuum rather than rupture. From Indo-Persian courtly exchanges to colonial reconstruction and contemporary global collaborations, Indian dance has continually negotiated identity and innovation.

Rooted in *rasa* theory, it offers the world an aesthetic model centered on emotional transcendence, symbolic embodiment, and spiritual intentionality. In conversation with ballet, modern dance, and global choreography, Indian dance does not dissolve into hybridity but asserts dialogic presence.

Intercultural aesthetics, therefore, becomes a process of reciprocal transformation—where Indian dance both absorbs and reshapes global artistic currents, contributing to a pluralistic and ethically grounded world performance culture.

References

1. Appadurai, A. (1996). *Modernity at large: Cultural dimensions of globalization*. University of Minnesota Press.
2. Arundale, R. D. (1968). *Bharatanatyam*. Kalakshetra Publications.
3. Bharata Muni. (2003). *The Nāṭyaśāstra* (M. Ghosh, Trans.). Manisha Granthalaya. (Original work published ca. 200 BCE–200 CE)
4. Chatterjea, A. (2004). *Butting out: Reading resistive choreographies through works by Jawole Willa Jo Zollar and Chandralekha*. Wesleyan University Press.
5. Desmond, J. C. (Ed.). (1997). *Meaning in motion: New cultural studies of dance*. Duke University Press.
6. Fischer-Lichte, E. (2008). *The transformative power of performance: A new aesthetics*. Routledge.
7. Kothari, S. (2011). *Kathak: Indian classical dance art*. Abhinav Publications.
8. Meduri, A. (2008). *Bharatanatyam: What are you?* Indialog Publications.
9. Schechner, R. (2013). *Performance studies: An introduction* (3rd ed.). Routledge.
10. Soneji, D. (2012). *Unfinished gestures: Devadasis, memory, and modernity in South India*. University of Chicago Press.

https://kalaasamiksha.in/
Kalaa Samiksha - Volume 02, No 06, June. 2026, PP 183-194 (Total PP 12)
ISSN : 3107- 4936(Online)
Frequency – Monthly
DOI : 10.67073/KCYT9408

11. Vatsyayan, K. (1997). *The square and the circle of the Indian arts*. Abhinav Publications.
12. Vatsyayan, K. (2007). *Classical Indian dance in literature and the arts*. Sangeet Natak Akademi.
13. Walker, M. (2016). *Ballet and modern dance: A concise history* (3rd ed.). Thames & Hudson.
14. Roy, A. (2014). *Interculturalism and performance now: New directions?* Palgrave Macmillan.
15. Shankar, U. (2012). *Uday Shankar and his art*. Roli Books.